



U. 0.

728

$\frac{52}{32}$

0152, 3 NAM, 1
J5

स्व० पं० प्रमृतालाल चव्वाली

0152, 3 NAM, 0929
J5

माला)

[illegible]

0152-3 NAME

76

मुद्रक—प्रतापनारायण चतुर्वेदी, भारतवासी प्रेस, प्रयाग।

❀ मुमुक्षु भवन वेद वेदङ्ग पुस्तकालय ❀

वाराणसी।

अपना क्रमांक..... 0721

दिनांक..... 7/6

1955



भूमिका

किसी भी भाषा को शीघ्रातिशीघ्र जानने के लिये उस भाषा विशेष के उपन्यास पढ़ना चाहिये। उपन्यास स्वाभाविक ही रोचक शैली में लिखे जाते हैं। उपन्यास की कथानक धारा में पढ़ते ही पढ़ने वाला कथानक धारा को पार करने का स्वयं प्रयत्न करने लगता है। कथानक की रोचकता उपन्यास की भाषा को सरल कर देती है। उपन्यास साहित्य का कोमल तथा मधुर अङ्ग है। प्रस्तुत उपन्यास चन्दा स्वर्गीय पं० अमृत-लालजी चक्रवर्ती द्वारा लिखित है। उपन्यास की भाषा परिमार्जित हिन्दी है। चित्तौर के भीष्म, राजकुमार चन्दा, इस उपन्यास के मुख्य पात्र हैं। सारा कथानक बड़ा ही रोचक है और एक ख्यातनामा साहित्यिक द्वारा लिखे जाने से इसकी उपयोगिता बढ़ गयी है। आशा है इस उपन्यास को अपना कर हिन्दी की जनता हमारा उत्साह बढ़ावेगी।

—प्रतापनारायण चतुर्वेदी

चन्दा

पहला अध्याय

सूर्य नारायण डूबने ही पर थे। पश्चिम आकाश उनकी बिदाई की ललाई से रङ्ग गया था। अरावली पर्वत की चोटियाँ मन्दी किरणों की सुनहरी छटा में मिल कर मानों रत्नगर्भा वसुन्धरा की सुवर्ण सम्पद दिखा रही थीं। पेड़ पौधे लता पता डाल पल्लवों की हरियाली पर सोने की न्यारी माधुरी झलका रही थी। आकाश में दावानल था, विश्व-संसार सुवर्णमय था—दृश्य बड़ा ही सुधुर, बड़ा ही गम्भीर, बड़ा ही मनोहर था। किन्तु नित्य देखने वालों की अभ्यस्त आँखें इन्द्रपुरी की बलिहारी बहार भी देख नहीं सकती हैं। वहाँ देखने के लिये चार विदेशीय आँखों के रहने पर भी उनके अभागों अधिकारी और ही तान में लगे हुए थे।

ये चार आँखें दो थके माँदे घुड़सवारों की थीं। घोड़े भी स्थूल बोझों से लदकर बड़े ही विवश हो पड़े थे। ये लोग बड़ी दूर से आ रहे थे। पहाड़ की उतराई चढ़ाइयों का लगातार सिलसिला पार करते हुए जाने का परिश्रम भुगतने वाले ही जान सकते हैं। थके हुए सवारों को थके हुए अबोल जानवरों की थकावट पर ध्यान देने का अवकाश न था। रोड़ा से भरी हुई

रहने से भी वैसी ही अनिश्चित है। सो आगे बढ़ते हुए परिश्रम से प्राणान्त करने की मूर्खता क्यों की जावे ? निरुपाय पृथिकों की बुद्धि ने जब यों ही युक्ति दी, तब वे घोड़े से चीज वस्तु उतार कर वहीं बैठ गये। अन्धकार से चाहे एक दूसरे को देखना बन न पड़े, बैठने का स्थान जहाँ रुखा खड़बिड़हा क्यों न हो— किन्तु रुद्धि हर घड़ी शेर भालुओं के सय से प्राण अकड़े हुए न रहते, तो पृथिकों के लिये गुरु पथश्रम के पश्चात् यह बैठना भी कितना ही सुखदायी होता। किन्तु गुप्त बधिक की अशङ्कित तलवार राजभवन की मखमली गद्दी को भी कण्टकशय्या बना देती है। बेचारे पृथिकों को इन कठोर शिलासनों पर क्या चैन मिले ? दोनों के ही सिर पर चित्त तपाने वाली चिन्ता की गर्म बोरसियां धहधहा रही थीं। दोनों में थोड़ी उमर वाले ने कहा—“अब प्राण नहीं बचेंगे।”

अधिक उमरवाले ने कहा,—लक्षण तो ऐसा ही जान पड़ता है। प्राण जायँ, तो जादे—चिन्ता केवल इतनी ही है कि, प्राण जाने से धर्म की रक्षा नहीं होगी !”

पहला—यदि प्राण ही गये, तो धर्म की रक्षा होने से क्या होगा ?

दूसरा—अजी क्या कहते हो,—प्राण जाने से केवल अपने ही प्राण जायँगे। कुछ दिन परिवार के लोग रो रो कर भूल जावेँगे। किन्तु धर्मरक्षा न होने से हमारी जाति का सर्वनाश होगा। हा गयाधाम ! उदण्ड यवनों के कठोरों कुठारों से तेरी रक्षा क्यों कर होगी ?

बुढ़े की आवाज भारी हुई। कदाचित् आँसुओं की दो चार बूँदें भी टपक पड़ीं। किन्तु अन्धकार में कुछ देखा नहीं गया। दूसरे ने भी बात की गम्भीरता अनुभव कर और कुछ कहने का साहस नहीं किया। यों ही अन्धकार में कुछ देर चुपचाप बैठे रहने के पश्चात् पथिकों ने एक विलक्षण दृश्य निरीक्षण किया। मालूम हुआ कि, सामने की पहाड़ी पर कई स्थानों में मशाल की भाँति रोशनी फिर रही है। देखते ही बुढ़े ने चिल्ला कर कही,—“कौन हो भैया ! हम राह भूले पथिक हैं, अड़चल में पड़ गये हैं, हमें बचाओ, हमें बचाओ।”

पथिकों का हर्ष अपार कर किसी ने आवाज दी। आवाज आई,—“डरो मत, डरो मत, हम तुम्हें ही ढूँढ़ रहे हैं।”

“हैं ! कोई हमें ही ढूँढ़ रहा है ! हम अपरिचित देश में अपरिचित मनुष्य हैं। हमारे इधर आने तक का पता किसी को नहीं है। हमारी खोज में कौन आ सकता है ?” यों ही असीम आश्चर्यपूरित किन्तु हर्ष भरी चिन्ता की उक्ता ही से दोनों पथिक पहाड़ी से उतरती हुई रोशनी को देखने लगे। शीघ्र ही मालूम हुआ कि, तीन चार आदमी एक तेज मशाल लेकर आ रहे हैं। दोनों पथिक आनन्द से मत्तवत् बन कर बारबार भगवान का नाम स्मरण कर उठ खड़े हुए। रक्षकों के आते आते छोड़े पर सब सामान रख कर वे यात्रा के लिये तैयार हुए।

मालूम हुआ कि किसी परिचित मनुष्य को ढूँढ़ने में रक्षकों ने भ्रमवश पथिकों का उद्धार नहीं किया है, वे लोक उन्हीं की रक्षा के लिये भेजे गये हैं। चित्तौर के राणा के ज्येष्ठ राजकुमार

चन्दा शिकार खेलने आये थे। लौटते समय उन्होंने राह पर एक भरा हुआ घोड़ा देखा। अनुमान किया कि, किसी पथिक का घोड़ा थक कर वहाँ मर गया होगा। यहाँ श्री नाथद्वारे के सिवा और कहीं पथिकों के टिकने का स्थान नहीं है। राजकुमार भी आज वहीं टिक रहे हैं। उन्होंने वहाँ जाकर जब किसी पथिक को टिक न देखा, तो सोचा कि निश्चय ही मरे घोड़े का अधिकारी पथिक राह भूल कर कहीं अड़ गया होगा। इसीसे राजकुमार ने चार चार आदमियों के कई दल बना कर एक एक मशाल के साथ ढूँढ़ने के लिये भेज दिये। जब ढूँढ़ते ढूँढ़ते पथिकों की आवाज़ मिली, तो और सब चले गये। केवल चार आदमी ले जाने को आये।

राजकुमार चन्दा की इस देव प्रकृति का परिचय पाकर, अपने उद्धार के लिये धन्यवाद से गद्गद् होकर, आन्तरिक आशीर्वाद देते हुए दोनों पथिक श्रीनाथद्वारे में पहुँचे।

दूसरा अध्याय

ऊपर की घटना से पाँचवे दिन चित्तौर की राजसभा में दो विदेशीय ब्राह्मण बैठे हुए थे। राजधानी चित्तौर नगरी की अनुपम राज-सम्पद देख कर पहले ही विदेशियों की आँखों में चकचकाना लग चुकी थी। राजसभा मानों उसी देवदुर्लभ सम्पद की अतुलनीय तिलोत्तमा थी। राजस्थान अवश्य ही दीर्घकाल से अगणित नरेशों की वीर-कीर्तियों का लीला-स्थल बन कर अपने नाम को सार्थक कर रहा है। जिस समय की घटना लिखी जाती है, उस समय भी राजाओं की संख्या अनेक थी। किन्तु मेवार के राणा मानों सब नरेन्द्रों के शिरोमणि थे। अपरिमित वंश-मर्यादा, अटल वीर-कीर्ति तथा नित्य की राज्य वृद्धि राणाओं की बड़ाई का प्रभाव प्रत्येक राजा, प्रत्येक वीर, प्रत्येक मनुष्य के हृदय में ला देती थी। सभी लोग भयभक्ति की प्रेरणा से राणा की सर्व प्रधानता मुक्तकण्ठ स्वीकार करते थे। उसी राणा की राजसभा राजसिक्क सम्पद की अलौकिक छटा से नेत्रों को झलकावे, तो आश्चर्य ही क्या है ?

सुविशाल दालान के एक प्रान्त में मणिमय सुवर्ण स्तम्भों पर मूल्यवान् लाल मखमल का काशदार चँदवा लगा हुआ है। उसकी चारों ओर की भालों से लाल नीलम पुखराजों की लाल नीली पीली आभा जगमगा रही है। चँदवे के नीचे रक्त-वस्त्र

मण्डित उच्च मञ्च पर मेवारी कारीगरी की अनिन्द्य स्वच्छता से सभी भेर का सच्चा प्रतिबिम्ब अपने अङ्ग में धारण कर सहस्रों घटनाओं का ऐतिहासिक सुवर्ण-सिंहासन सुहा रहा है। सिंहासन पर राजाओं के राजा लक्खा राणा राजाओं, सरदारों, प्रजा के प्रधानों, सर्वशास्त्र पारङ्गत हितैषी ब्राह्मणों, राजनीति विशारद प्राङ्गविवार्कों तथा काव्यामृत 'पितृाने' वाले कवि कोकिलों से घिर कर नक्षत्र पुञ्ज में निशानाथ की भाँति विराजमान हैं। मानों भुजयुगल के अमानुषी तल से रत्नाकर समुद्र को मथन कर रौणा ने अपने कण्ठहार की सुवृहत सुदर्शन मोतिपातियाँ निकाली हैं। राजमुकुट के विशाल आकार, मणियों की मोहनी छटा, प्रतिवार नये नये दर्शन—सुख का उपहार दे रही है। दोनों ब्राह्मण इस स्वप्राप्ति सम्पद पर चक्रित स्तम्भित हुए। सब से बढ़ कर आश्चर्य उनको राणा की वीरमूर्ति देख कर हुआ। वह मूर्ति मानो शत्रु विजय ही के लिये बनाई गई थी। राणा की उमर अवश्य ही खूब ढल गई थी; किन्तु उस सफेद दाढ़ी, सफेद मूँ, सफेद भौं के नीचे क्षत्रिय का यौवन शौर्य अभी तक कूट कूट कर भरा हुआ था।

दोनों ब्राह्मणों में से अधिक उमरवाले ने सोचा कि, जब तक भारत के किसी राजसिंहासन पर ऐसी उदारमूर्ति विद्यमान रहेगी, तब तक भारत का वीर-प्रताप अटल बना रहेगा। ब्राह्मणों ने हर्षपूरित हृदयों से और भी विचारा कि, हमारा वहाँ आना अवश्य ही साधक होगा। पवित्र तीर्थ गया, धाम बनारस के श्लेच्छ हस्तक्षेप से कदापि कलुषित न हो सकेगा। पाठक

कदाचित् इन दोनों ब्राह्मणों को पहचान गये होंगे। ये उस दिन के राह भूले पथिक हैं। उस रात को वे श्रीनाथद्वारे में देवता का प्रसाद पाकर मन्दिर ही में टिके हुए थे। आगे प्राण बचाने वाले ज्येष्ठ राजकुमार की कृपा से राजसभा में पहुँचाये गये हैं। अब इन ब्राह्मणों का और भी कुछ परिचय देना प्रयोजनीय है।

इतिहास पढ़े हुए पठक जानते हैं कि, भारतवर्ष में यवन-राज्य प्रतिष्ठित होने के बहुत पहले से मुसलमान लोग भारत के स्थान-स्थान पर आक्रमण कर लूट खसोट मचाते थे। सञ्चित धन लूटने तथा नगर गाँव जलाकर भस्म करने के उपरान्त और भी अनेक प्रकार के घोर अत्याचार करते थे। सब अत्याचारों से बढ़ कर देवस्थानों का उपद्रव था। धन के लोभ से हारे आदि से जटित कितनी ही देवभूतियों को तोड़ते थे, स्वधर्म के कट्टरपन से केवल पराये धर्म पर पदाघात करने ही के लिये कितने ही देवस्थानों को कुत्सित क्रियाओं से कलुषित करते थे। हिन्दुओं का हृदय विदीर्ण होता था। वे दलबद्ध होकर अवश्य ही मुसलमानों की कुक्रियाओं में बाधा देने की चेष्टा प्राण प्राण से करते थे। किन्तु उन दिनों मुसलमानों के सौभाग्य का शुक्र-तारा पूरी झलक से चमक रहा था। प्राचीन हिन्दू जाति परस्पर की फूट के विष से जर्जरित हो पड़ी थी। मुसलमानों को मार भगाना सब बलवानों का समान इष्ट रहने पर भी जहाँ कोई बलवान दलबल सहित उनका सामना करने को उद्यत हो जाता था, तहाँ सब दूसरे अलग रह कर उसकी पराजय का आनन्द को आनन्द अनुभव करते थे। यही आनन्द अनुभव करते

प्रायः सम्पूर्ण पश्चिम भारत हृदय विदीर्णकारी हाहाकार से परिपूर्ण हो गया। क्रमशः मुसलमान आक्रमणकारियों का दौसिला पूर्व ओर को भी अग्रसर होने का हुआ। वे सम्पूर्ण हिन्दुओं की चिर दृष्टभूमि गयाधाम पर धावा करने के घात में हो गये।

गंगा के ब्राह्मण तब तक ब्राह्मण थे। ब्राह्मणों के वेदगान से तब तक गयाधाम मुखरित होता था। शास्त्रचर्चा, पवित्रवृत्ति, धर्मानुराग से हिन्दूमात्र के तीर्थगुरु गयावाल तब तक सच्चे गुरु होने के अधिकारी थे। वे अपनी सूक्ष्म बुद्धि से भारत की दैनिक अवनति का यथार्थ कारण अनुभव कर गयाक्षेत्र की मुसलमानों से रक्षा करने के लिये भारत भर के परिचित वीर, राजस्थान के राजाओं को एकत्र करने का प्रबन्ध करने लगे।

इसी चेष्टा में राजस्थान भ्रमण करते हुए हमारे परिचित दोनों ब्राह्मण मेबार आये हैं। राजसभा में प्रवेश करते ही राणा ने ब्राह्मणों की पदबन्दना कर उनको अथोचित सत्कार से उचित असन पर बिठाया। आशीर्वाद देकर दोनों ब्राह्मण जब बैठे तब राणा के प्रश्न करने पर वृद्ध ब्राह्मण कहने लगा,—“पृथ्वीनाथ ! जिस कारण से हम आये हैं, उसके कहने में हृदय व्यथित होता है। सम्पूर्ण भारतवासियों के पितरों का पिण्ड लोप होना चाहता है। गदाधर का श्रीपादपद्म अब पृथिवी त्यागने पर हुआ है। गयाजी का अलौकिक महिमा अब बिगड़ना चाहता है।”

राणा ! क्यों क्यों ?

ब्राह्मण ! वह देखिये, पश्चिम आकाश में कैसी घनघोर घटा उमड़ आई है। “अमोघा पश्चिमे मेघाः।” — अधर्म की शोचनीय वर्षा से भारतभूमि अब रसातल चली जाना चाहती है—

राणा ! मुसलमानों को कहते हैं ?

ब्राह्मण ! महाराणा तो सभी बात जानते हैं। ही मुसलमानों ही को कहते हैं। नये पन्थ के ये कट्टर उत्साही भारतवासियों के एकमात्र अतिप्रिय धर्मधन को लूटने के लिये कटिबद्ध हुए हैं। अनादि काल से पितरों की सञ्चित इस अमूल्य वस्तु की रक्षा उनके कुसन्तानों से नहीं हो रही है। राजाओं का ऐश्वर्य, धनियों का धन, गृहस्थों का अन्न—यदि पृथिवी का सर्वस्व देने पर भी धर्म की रक्षा हो, तो भारतवासी हरे भरे ही रहेंगे। किन्तु धर्म से च्युत होते ही उनका सर्वनाश हो जायगा।

राणा ! निःसन्देह ! निःसन्देह ! धर्म ही भारतवासियों का प्राण है, धर्म ही उनका धन है, धर्म ही उनका सर्वस्व है। किन्तु विप्रवर ! धर्म कैसे नष्ट हो सकता है ? धर्म रक्षा के लिये धर्म रक्षक ब्राह्मण अभी तक बने हुए हैं, ब्राह्मण रक्षा के लिये देश रक्षक क्षत्रिय अभी तक जीवित हैं; अधर्म दूर करने के लिये क्षत्रिय के हाथ में तलवार अभी तक बनी हुई है।

ब्राह्मण ! क्षमा कीजिये, महाराणा ! केवल तलवार ही क्षत्रियों का बल नहीं है। केवल तलवार का बल आसुरों का बल है। यह आसुरिक बल अवश्य ही अभी तक क्षत्रियों में बना

हुआ है। किन्तु जिस बल से क्षत्रिय पृथिवी विजयी थे, उस नीतिबल से अब क्षत्रिय वर्जित हो रहे हैं। नीति-कुशल-क्षत्रियों के अबोध वंशधर अब विरोधी को हितैषी बनाना भूल गये; अब क्षत्रिय भ्रातृ-द्रोही, मित्र-द्रोहा, स्वजन-द्रोही हैं। अहङ्कार की अग्निमूर्त्ति बन कर, उदारता की प्रेम्नीति पर पदाघात कर क्षत्रिय अब प्रेमी हितैषियों को भी घोर शत्रु बना रहे हैं। जिनके घर ही शत्रु पूर्ण हैं—भाई शत्रु, मित्र शत्रु, स्वजन शत्रु—सब केवल शत्रु ही शत्रु बन गये हैं; सबको शत्रु बना कर जो अहर्निश शत्रुपुरी में वास कर रहे हैं, वे विदेशीय शत्रुओं का सामना कैसे करेंगे? महाराणा अवश्य ही सुन चुके होंगे,—इसका कैसा विकट परिणाम आजकल पश्चिम भारत को झेलना पड़ता है। वहाँ विदेशीय विधर्मी स्लेच्छ शत्रु आकर देशवासियों की जो कुछ प्रिय सामग्री है, सभी लूट रहे हैं, सभी बिगाड़ रहे हैं। सैकड़ों सहस्रों सती सावित्रियों के उष्ण अश्रु-जल से धरती की ज्वाला असहनीय हो रहा है। पिता के सामने, भ्राता के सामने, पति के सामने स्लेच्छ आलिङ्गन से अभागिनी कुलवती का सर्वनाश हो रहा है—हा भगवन्! स्वप्न में भी जिस दृश्य की चिन्ता आने से कलेजा चूर चूर हो जाता है, भारतभूमि में नहीं लीला दिन दहाड़े संघटित हो रही है और क्षत्रिय नाम के कुत्सित कुलाङ्गार जीते जागते वही दृश्य देख रहे हैं।

राणा ! ओ हो हो ! अब सदा नहीं दाती क्षमा करो !
 ब्राह्मण ! क्षमा करो !

अश्रुजल से राणा के दोनों कपोल प्लावित हो रहे थे।
 असीम-हृदय वेदना से, सर्व शरीर थर थर काँप रहे थे। किन्तु
 तो भी निर्दय ब्राह्मण ने क्षमा नहीं की। कहा,—“नहीं महा-
 राणा ! क्षमा करने का समय अभी तक नहीं आया है। भारत-
 भूमि में अभी तक विषम वेग से पापस्रोत प्रवाहित हो रहा है।
 अभी तक हतभाग्यों के हाँकीकुर से दशों दिशाएँ गूँज रही हैं।
 स्लेच्छ अत्याचारी उत्साहित होकर अपने अत्याचारों की अवधि
 और भी बढ़ाने पर हुए हैं। वे गयातीर्थ तक धावा करने को
 प्रस्तुत हो रहे हैं। तीर्थ धामी के सभी नर नारी भीत चिन्तित
 हुए हैं। सब लोग अपनी रक्षा के लिये महाराणा की ओर,
 राजस्थान के क्षत्रियों की ओर ताक रहे हैं। गयाधाम की रक्षा,
 कीजिये; देव द्विजों की विपद दूर कीजिये; भारत का उद्धार
 कीजिये; पुण्य भूमि से पापियों को मार भगाइये; स्वधर्म का
 पालन कीजिये।”

राणा को चिन्तायुक्त निर्वाक देख कर एक अधीनस्थ नरेश
 ने कहा,—“विप्रवर ! समस्या बड़ी ही कठिन है। विचार के
 लिये महाराणा को कुछ समय दीजिये।”

राणा ! नहीं नहीं, भाई जी ! अब विचार का प्रयोजन
 नहीं है। इतने दिन स्वधर्म से मुँह मोड़कर जो घोर पाप किया
 है अब शत्रुओं के रक्त से अथवा अपने ही रक्त से उसका
 प्रायश्चित्त करूँगा। आज कृष्णपक्ष की सप्तमी है। आज से
 सातवें दिन चतुर्दशी की रात्रि को महापूजा से भगवान् एकलिंग
 की प्रसन्नता लाभ कर युद्ध-यात्रा करेंगे। देखेंगे—स्लेच्छ मुसल-

मान किन्तनी शक्ति धारण करते हैं।

ब्राह्मण । धन्य महाराणा ! धन्य महाराणा !

आनन्दाश्रु से ब्राह्मण का कण्ठरोध हुआ । और कुछ कहा नहीं गया । ऐसे ही समय में ज्येष्ठ राजकुमार चन्दा ने सिंहासन के समीप अग्रसर होकर हाथ जोड़कर विनीत वचन से कहा,—
“महाराणा ! दास का एक निवेदन है । यदि म्लेच्छों को मार भगाने का भार दास पर अर्पण किया जाय, तो बड़ी कृपा हो । आज्ञा देने से दास की बहुत दिनों की प्यारी अभिलाषा पूरी होगी ।”

राणा के मुख पर सुमधुर प्रफुल्लता छा गई । उन्होंने कहा,—“बेटा ! यह प्रार्थना क्षत्रिय सन्तान ही के योग्य हुई है । किन्तु बेटा ! इस युद्ध में जाने की प्रतिज्ञा मैं कर चुका हूँ । फिर राज्य रक्षा के लिये तुम्हारा मेवार में रहना ही प्रयोजनीय है । अब सदा के लिये राजासन त्याग देने का भी विचार मैं कर चुका हूँ ।”

राणा की बात पूरी होने से पहले वृद्ध ब्राह्मण कह उठा,—
“युद्ध में महाराणा ही का जाना प्रयोजनीय है । हम राजस्थान के प्रायः सभी राजाओं के यहाँ गये थे । सभी ने ही गया यात्रा से पहले अपनी अपनी सेना प्रयोग में इकट्ठी करने का सिद्धान्त कर लिया है । राजस्थान भर की विशाल क्षत्रिय सेना का भार महाराणा ही को ग्रहण करना होगा । सभी ने महाराणा ही को सेनापति स्वीकार किया है । अन्तिमों में ऐसा विशाल प्रकाश बहुत दिनों के पश्चात् लक्ष्मिगोचर हुआ है ।”

सभा भङ्ग होने से पहले राणा ने इस विषय में उपस्थित
अधीन राजा तथा सरदारों की सम्मति पूछी। सभी ने नंगी
तलवार मस्तक पर धारण कर मानो एक स्वर से कहा,—“महा-
राणा की आज्ञा सदा हमको शिरोधार्य है!” आगे राणा
ने देश भर में युद्ध यात्रा की मुनुादी फिरवाने की आज्ञा देकर
सभा भङ्ग की।

तीसरा अध्याय

लकखा राणा के तीन पुत्र ही इतिहास से सम्बन्ध रखते हैं । उनमें राजकुमार चन्दा ज्येष्ठ हैं । ज्येष्ठ राजकुमार के पितृ-सिंहासन पर बैठने की प्राचीन हिन्दू प्रथा तो है ही । तिसके उपरान्त राजकुमार चन्दा विद्या बुद्धि वीरता उदारता प्रभृति गुणों में असाधारण श्रेष्ठता लाभ कर राजा प्रजा दोनों के परम आशास्थल बने थे । वृद्ध राणा, सुयोग्य पुत्र रत्न को राज्य भार देकर पुढ़ापे की मुनिवृत्ति अवलम्बन करने की सुख शान्ति भरी कल्पना करने लगे थे । ऐसे ही अवसर में एक बड़ी ही विचित्र घटना हो गई ।

यद्यपि तब तक मेवार के राणाओं ने मुगल बादशाहों को बेटी बहन न देने की रक्त स्रोत बहाने वाली सर्वनाशी अटल प्रतिज्ञा की । अग्नि-परीक्षाओं से अपने निष्कलङ्क कुल की सव-श्रेष्ठता संसार के सामने सिद्ध नहीं कर दी थी, तौ भी बप्पा रावल के गौरवमय शिशोदीय कुल में कन्यादान क्षत्रिय मात्र के लिये असीम गौरव की बात थी । मारवाड़ के राठौर नरेश रण-मल ने इस प्रकार गौरव लाभ की प्यारी अभिलाषा से मेवार की राजधानी चित्तौर में नारियल भेज दिया । जब दूत दल का मुखिया आग्रह नारियल लेकर राजसभा में उपस्थित हुआ तब उचित अभ्यथना के पीछे राणा ने हुंकर दाढ़ी फटकारते हुए

कहा,—“इस पक्की दाढ़ी के लिये अवश्य ही नारियल भेजने का खिलवाड़ नहीं किया गया होगा !” नारियल आते समय ज्येष्ठ राजकुमार चन्दा सभा में न थे । किन्तु राणा की बात पूरी होने से पहले वह सभा में आ कर पिता की आलोचना सुनने लगे थे । पुत्र को आते देखकर राणा ने दूत ब्राह्मण को इशारा किया और अपनी बात पूरी करने में कहा,—“नारियल ऐसे ही सुयोग्य नवयुवा के लिये निःसन्देह आया होगा !”

ब्राह्मण आगे बढ़ कर नारियल देने लगा । राजकुमार संकुचित होकर पीछे हट । पुत्र का व्यवहार देखकर पिता को बड़ा ही आश्चर्य हुआ । दूत ब्राह्मण के मुख पर अपमान की ललई छा गई । राणा ने क्षोभ और आश्चर्य से चञ्चल होकर कहा,—“बेटा ! यह क्या करते हो ? नारियल क्यों नहीं लेते ?” चन्दा ने स्वाभाविक नम्रता से कहा,—“पिता ! मैं नारियल लेने के अयोग्य हूँ ।”

राणा ! क्यों क्यों, तुम किस बात से अयोग्य हो ? शरीर के बल, मन के बल, बुद्धि के बल—मनुष्य मात्र के प्रार्थनीय कौन से बल से राजकुमार चन्दा सुशोभित नहीं है ? युवराज की पुरुषोचित रूपवटः तथा मनोहर यौवन छवि देखकर कौन से राजकुमार को ईर्ष्या नहीं उभरती है ? मेवार के भविष्य राणा की दुर्लभ सम्पद कौन से क्षत्रिय नरेश को कन्यादान के लिये नहीं ललचाती है ? युवराज चन्दा राठौर की कन्या के अयोग्य हैं ! बेटा ! ऐसी अयोग्य बात फिर न कहना ।

इच्छा के विरुद्ध बातें करने की ढिठाई दिखानी पड़ती है। आपने चर्तिसल्यवश पुत्र में जिन गुणों की कल्पना की है, यदि वे सत्य ही मुझ में आ गये हों, तो भी मैं सर्वथा यह नारियल लेने के अयोग्य हूँ ! पिता ! पितृ-आज्ञा अतंघनीय है। इस विषय में आज्ञा देकर दीन सन्तान को पाप सागर में न बहाइये।

‘राणा’ के मुख पर कभी कोप का प्रकोप रंगी रहा था; कभी अकथनीय विषम आश्चर्य का संस्कार हो रहा था। अबाध्य पुत्र की असह्य ढिठाई पर कभी क्रोध की विष-राशि बरसाने की प्रवृत्ति हो रही थी। कभी वह सोच रहे थे,—“न जाने सदा का आज्ञाकारी आज किस प्रपञ्च में पड़कर ऐसा अनुचित व्यवहार कर रहा है। पाप की बात का क्या अर्थ है ? प्रसिद्ध सत्कुल की राजकन्या ग्रहण करने में क्या ‘पाप’ हो सकता है ?” इस प्रकार विरुद्ध चिन्ताओं की खैचातानी में पड़कर राणा अपना ‘रामयानु’सार कर्तव्य स्थिर करने में असमर्थ हो रहे थे। ऐसे ही अनिर्दिष्ट विचार के सुख हर समय में शक्तिमान माननीय माड़वार नरेश के अनुचित ‘अपमान’ की चिन्ता उनको एक बार ही हैरान कर रही थी। बिना कारण सब सम्मानित का सम्मान तोड़ने की अनुदारता के उपरान्त इस प्रकार अपमान का रक्तरञ्जित परिणाम मानो स्वरूप धारण कर उनके सम्मुख नाच रहा था। योंही विवश हो कर राणा कह उठे,—राजकुमार की बातें पहेली की भाँति समझ के बाहर हैं। मित्र नरेश को यों शत्रु बना कर मेवार वासियों को हक नाहक विषय में डगमगाते की कार्रवाई बिना विलम्ब सुनना चाहते हैं।”

राजकुमार चन्दा बड़े ही कातर होकर कहने लगे,—“पिता ! पुनर्वार क्षमा प्रार्थना माँगता हूँ। मैं मारवाड़ नरेश का यथेष्ट सम्मान करता हूँ। मेरे व्यवहार से मेवारवासी विपद्ग्रस्त होते हों, तो अपना प्राण नोच डालना भी मैं सुखसाध्य समझता हूँ। किन्तु पिता ! यह नारियल लेना मेरे लिये साध्यातीत है। कारण न पूछिये—कारण कहने से पिता के हृदय में व्यथा लगेगी—”

राजकुमार और भी कुछ कह रहे थे। राणा ने बाधा देकर क्रोध की व्यग्रता से कहा,—“पिता के हृदय में जो व्यथा दी जाती है, उससे बढ़कर दुःख और क्या हो सकती है ? इसी क्षण और एक भी बात बिना कहे, मैं उस कारण को कहने की आज्ञा देता हूँ।”

“चन्दा—महाराणा की आज्ञा शिरोधार्य है। जिस नारियल को हँस में भी पिता ने अपने लिये आया हुआ समझा था। उससे पुत्र की सगाई नहीं हो सकती है। मारवाड़ राजपुत्री से मेरा माता पुत्र का सम्बन्ध हो गया है। इसी से पितृ देव की सहस्रों अयोग्य इच्छाओं को भी पालन करने में सदा तत्पर चन्दा को आज हृदयपिण्ड तोड़कर नारियल लेने की इच्छा अस्वीकार करनी पड़ती है।”

राजकुमार के अश्रुवेग ने अब बाध नहीं मानी। उनकी दोनों आँखें फाड़कर, आँसुओं की अनैर्गल धारा बहने लगी। मानो अपराधी की भाँति सिर नीचे किये राणा के सम्मुख खड़े वह खेने लगे।

कि मानो एक सुई तक के गिरने की आवाज सुनाई देगी। कदाचित कोई मनुष्य साँस तक नहीं ले रहा था। राणा के मुख पर कभी अनुपात का फीकापन प्रत्यक्ष हो रहा था; कभी क्षत्रिय प्रकृति की स्वाभाविक उप्रता दिखाई देती थी। कुछ काल इसी दशा में बिताने के पश्चात् राणा के मुख ने किसी उत्कट प्रातिज्ञा की विकट छबि धारण की। उन्होंने कहा,—“सो नारियल मुझे ही लेना पड़ता है। किन्तु यदि विवाह से मेरे पुत्र सन्तान हो—”

मानो मन्त्रबल से राजकुमार के आँसू सूख गये। अनुपात की उदासी के स्थान में हृदयवेधकारी अनिश्चयता दूर होने की प्रफुल्लता उनके मुख पर विराजने लगी। उस शिथिल शून्य मुख प्रकृज पर भी किसी अटल प्रतिज्ञा की दृढ़ता दिचित्र हो गई। किन्तु वह दृढ़ता स्वार्थशून्य सरल हृदय की मधुरता प्रकट करने लगी। उदार निरुद्वेग चित्त के मनोमोहन मधुर स्वर से राणा की अधूरी बात पूरी कर राजकुमार कहने लगे,—“तो वही पुत्र राणा की राजगद्दी पर बैठेगा। राणा का वही पुत्र वंश परम्परा से मेवार वासियों का राजा होगा। आकाश के सूर्य देव साक्षी रहें, उस नरेन्द्र के आगे सिर नवाकर राजकुमार चन्दा जीवन मरण में उनका हितैषी बना रहेगा।”

“धन्य धन्य धन्य !” प्रत्येक मनुष्य का अबाध्य कण्ठ स्वतः ही धन्यवाद ध्वनि कर उठा। कदाचित सब लोग क्षण काल के लिये राजसभा में राणा की स्थिति भूल गये अथवा धन्यवाद की असीम प्रेरणा ने राणा की स्थिति के उचित सम्मान का नित्य नियम मुला दिय। राजा के अपमानित राजदूत से भी उस

धन्यवाद ध्वनि में कण्ठ बिना मिलाये रहा नहीं गया और कदाचित् अनन्त आवेग से अति कातर राजा के ओठ भी धन्य धन्य ध्वनि निकालने लगे। वह सभाप्लावी धन्यवाद ध्वनि मर्नो स्वरूप वारण कर कहने लगी,—“द्वापर के अन्त में कुरु पाण्डवों के पितामह, महाभारत के आदर्श चरित्र महात्मा भीष्मदेव ने पितृ-सिंहासन त्याग देने की, जो अस्मनवी स्वाथे शून्यता दिखाकर संसार को चकित स्तम्भित किया था, आज राजकुमार चन्दा ने इस विकट कलिकाल के स्वार्थमय मध्य भाग में उसी निष्कलङ्क निःस्वाथे व्यवहार का अनुपमोद्भव चरित्र प्रकट किया।”

पुत्र के व्यवहार से एक बार ही गदगद होने पर भी नारियल ग्रहण करने के बिना उस समय राणा के लिये कोई दूसरा उपाय ही न था। लोगों का हृदय जेग कुछ शान्त होने पर राणा ने आहिस्ते आवाज दूत को बुलाकर स्वयं नारियल ग्रहण किया।

चौथा अध्याय

राठौर की कन्या कमलावती से विवाह के पश्चात् लक्खारणा ने सात दीर्घ वर्ष बिताये हैं। इस बीच में एक नवकुमार प्रदान कर मेवार की नई राणी ने राणा को नवीन बन्धन से फाँसा है। शिशु राजकुमार का नाम मुकुलजी है। कभी हँसा कभी रुलाई की मधुर कोलाहल ध्वनियों से राजभवन गुँजे तथा युवती जननी और वृद्ध पिता के हरे और सूखे हृदयों में समान प्रभाव का कोमल कल्प वृक्ष जमाते हुए शिशु मुकुलजी ने जीवन के लघु चार वर्ष देखे हैं। इन कई वर्षों में राजकुमार चन्दा ने मुकुलजी पर निष्कपट भ्रातृप्रेम का प्रत्यक्ष प्रमाण दिना कर राणा का स्वलित अनुराग पुनर्বার लाभ किया है। संसार की विचित्र गति निहारिये—जहाँ से उत्पत्ति हुई, वहीं विलय होते की लीला देखिये—जिस कमलावती की चर्चा ने पुत्र को कुपुत्र बना दिया था, उसी कमलावती के पुत्र ने पिता पुत्र के बीच में पुनर्बार सद्भाव स्थापन किया है; कुपुत्र को पुत्र बना दिया है। संसार में स्वार्थ ही की श्रेष्ठता सर्वोपरि देखी जाती है। स्वार्थ ही से पुत्र पर स्नेह है; स्वार्थ ही से पत्नी पर प्रीति है; स्वार्थ ही से स्वजन के साथ सम्बन्ध है। नहीं तो जिस पुत्र का जन्म पिता के हृदय में आनन्द की मधुर प्रत्यक्षिणी प्रवाहित करता है, जिस पुत्र की प्रत्येक दाल लीला पिता के हृदय में स्वर्गीय मन्दार की

नई नई गन्ध तरङ्ग भर देती है, युवा होने पर वही पुत्र पिता की प्रीति के प्रतिकूल कार्य कर क्योंकर कुपुत्र हो जाता है? सो पुत्र किसी का कोई नहीं है; कोई किसी का कोई नहीं है स्वार्थ से भरी प्रीति का अनुकूल कार्य ही सर्वस्व है। यदि यह बात सत्य नहीं होती, तो यह सुदारुण सत्य उदार वीर-लोकहितैषी लक्ष्मी राणा की भी प्रीति की नीति से सिद्ध नहीं होता।

चन्दा इस समय राणा के अति प्रिय पुत्र हैं जिस मुकुल जी ने मुनिवृत्ति की कठोर कल्पना बिगाड़कर बूढ़े के मुर्माये हृदय में कोमल मुकुल उपजाये हैं, उसे चन्दा ने अपने से बढ़ अपना बना लिया है। चन्दा उसे खेलाते हैं, खिलाते हैं; देखते हैं, दिखाते हैं; परम अनुराग से आलिङ्गन कर इसी शिशुपन ही से उसे राजा होने के योग्य गुणों की शिक्षा देते हैं; बालचित्त की सर्वग्राही तरलता पर उच्च आदर्श की सुन्दर छवि अङ्कित कर शिशु को श्रेष्ठ पुरुष बनाने के लिये भाँति भाँति के कोमल कौशल रचते हैं। सो चन्दा पर अब राणा के प्रेम का पीर नहीं है। राणा को अब स्पष्ट विश्वास हो गया है कि, चन्दा ने राठौर के भेजे हुए नारियल के विषय में पिट्ट इच्छा की, जो प्रतिकूलता की थी, वह ठिठाई दिखाकर पिता को अपमानित करने के लिए नहीं की। स्वच्छ विश्वास से उस सगाई को अनुचित समझ कर ही चन्दा वैसा अप्रिय बर्ताव करने को बाध्य हुए थे। इस प्रकार का सिद्धान्त होते ही राणा के अपने लक्ष्य के अन्तर्गत प्रेम-अनुपात होने लगा। वह सोचने लगे कि, पुत्र ने कुल

अन्याय नहीं किया था; मैंने ही अन्याय क्रोध प्रकाश कर पुत्र से कठोर प्रतिज्ञा निकाल ली।

जब राणा ने गयावाल ब्राह्मणों से स्लेच्छों के विरुद्ध युद्ध यात्रा करने की प्रतिज्ञा की, तब उन्होंने सदा के लिये राजसिंहासन त्याग देने का निश्चय भी कर लिया। सोचा कि, यदि युद्ध से विजय लाभ होगा, तो फिर राज्यशासन के झगड़े में न फँसूँगा और यदि प्राण जायेंगे, तो फिर किसी बात का प्रयोजन ही न रहेगा। सो दोनों ही दिशाओं में मेवार के लिये राजा चाहिये। ऐसा सिद्धान्त कर राणा विचारने लगे—“क्या राजकुमार चन्दा प्रतिज्ञा को स्मरण कर राजा नहीं होंगे? यदि चन्दा राज्यभार धारण न करेंगे, तब तो मेवारवासी मेरे कुकार्य से बड़ी ही हानि उठावेंगे। मुकुल बड़ा हटकर कैसा होगा, सो निश्चय नहीं है; उधर चन्दा सर्व्वगुणशाली हैं;—ऐसा गुणशाली पुत्र पितरों के अनन्त पुण्यफल से प्राप्त होता है; ऐसा गुणशाली राजा प्रजा के परम सीमाग्य से लाभ होता है। चन्दा के राजा न होने से हानि की सीमा नहीं रहेगी। हाय ! मैंने बुद्धि भ्रष्ट होकर क्या किया ?

राणा अनुपात की आग से जलने लगे। उनके चित्त की शान्ति एक बारही हूँ गई। खाने पीने, सोने जागने, उठने बैठने अहर्निश, किसी दशा में भी उनको सुख न रहा। परिवार के लोग राणा का चित्तविकार देखकर चिन्तित होने लगे। कुछ लोग उनके चित्त विकार का कारण अपना मनमाना विचारने लगे। किसी डरपोक ने सोचा,—खुदापे में युद्ध यात्रा की प्रतिज्ञा कर

राणा भय खा गये होंगे।” किसी रसीले ने साथियों के समांज में प्रकट किया,—“अजी नहीं जानते, वृद्धस्य युवती माय्या, घर छोड़कर कहीं जाना क्या सीधी बात है? हाँ, और यदि यह जाने ही लगे तो वह कब छोड़ती है?” किसी त्रिकट बुद्धिमान ने विचारा,—“राजकुमार चन्दा गद्दी पर न बैठने की बात हजार क्यों न कहें, किन्तु महाराणा के जाने से वह थोड़े ही मुकुल को राणा बने रहने देंगे?—उसी सोच से राणा हैरान होते होंगे।” योही बहुतेरे लोग बुद्धि की दौड़ के अनुसार राणा के चित्त-विकार का कारण ठहरीने लगे। किन्तु थोड़े ही लोग सच्चा कारण अनुमान कर सके। जो अनुमान कर सके, वह स्वयं चन्दा थे। ठीक ठीक अनुमान कर चन्दा को भी चिन्तानल स जलना पड़ा। पिता की यह हृदय वेदना दूर करने का उपाय शत्रुभक्त पुत्र को नहीं सूझा।

राणा को बार बार इच्छा होने लगी कि, पुत्र चन्दा से कुछ कहें। किन्तु इच्छा उपस्थित होते ही हृदय में भय होने लगा। वह विचारने लगे कि, यदि चन्दा अपनी प्रतिज्ञा भूल गये होंगे, तो मेरे कहते ही वह चेत जायेंगे। सो सोते सिंह को जगाने की मुखता क्यों करें? यों प्रतिज्ञा भूलने का विचार राणा के जो में उठने पर उनको कुछ आशा की लौ सी दीख पड़ने लगी। स्वयं क्षत्रिय होने पर भी पुत्र के प्रेम से अन्धे पिता की क्षतियों के प्रतिज्ञा भूलने की सम्भावना नहीं सूझी। फिर जिस प्रतिज्ञा की बात को उसको बुझाये की खोटी स्मरण शक्ति नहीं मुलाभकी थी, जिस प्रतिज्ञा की बात को रणिय के सब दूसरे लोग स्मरण

किये हुए थे, उसे स्वयं प्रतिज्ञा करने वाले क्या कभी भूल सकते थे ?—यह युक्तिपूर्ण चिन्ता बूढ़े के प्रेमान्ध हृदय में नहीं उठी। वह भूल गये कि पाषाण परका चिन्त, चिरस्थायी होता है; वह भूल गये कि, क्षत्रिय का चित्त प्रतिज्ञा के विषय में पाषाण से भी पाषाण है। इस भूल से उभरी हुई कथञ्चित् शान्ति वह अन्त में अनुभूत करने लगे।

इस प्रकार विचार वितर्क में युद्ध यात्रा का दिन ज्यों ज्यों निकट होने लगा, त्यों त्यों राणा, पुत्र के राज्याभिषेक की तैयारी करने लगे। मेवार में राज्याभिषेक की तैयारी साधारण बात नहीं है। पूर्व राणाओं के राज्याभिषेक का व्यय प्रायः एक करोड़ होता था। इन दिनों एक करोड़ मेवारी रुपया आजकल सरकारी छः करोड़ रुपये से भी कुछ अधिक है। मेवार राज्य की वार्षिक आय उन दिनों इस रुपये से कुछ ही अधिक थी। प्रायः वर्ष भर की आय राजटीका में व्यय करने की तथा पृथिवी में एकमात्र मेवार ही दिखाने को समर्थ हुआ है। तिलकोत्सव के असाधारण व्ययशाली नियमों का दिखाने का स्थान उपन्यास नहीं है। किन्तु तो भी एक रोमाञ्च करने वाली चिरस्थायी रीति का उल्लेख बिना किये रहा नहीं जाता है।

राणाओं के राज्य के आदि प्रतिष्ठाता बप्पा रावल आश्रय हीन, कण्ठहीन, स्वर्जन-विहीन होकर शेर भालुओं के विशाल, आलय, पहाड़ जङ्गलों में घूम रहे थे। जिसका कुछ नहीं है, जिसका कोई नहीं है, वन ही उसका सर्वोत्तम आश्रय है। अभागों के उस आश्रय में भयानक बप्पा रावल को बन्धु मित्रे।

वे बन्धु मनुष्य शरीर के शेरु भाखू थे। नरशोणित में नहाकर।
 रक्तमूर्ति धारण करना जिनका अतिप्रिय स्वधर्म है, वे ही बृनचर
 बप्पा के बनवास क्लेश से कातर हुए। पत्थर पसीजा; कीचड़
 में कमल उपजा। भीलों की दया से बप्पा के प्राण बचे। बप्पा
 भीलों के राजा हुए। सिंह जिसे कन्धे पर ले, सर्प जिसका
 सहाय हो, उसके सौभाग्य की सीमा ही क्या है? भील सहस्रों
 का अमानवी शक्ति का प्रभु होकर बप्पा ने मनुष्यों के राजेश्वर
 को विवस्त किया। अपने आश्रित प्रभु के नरेन्द्र की विजय करने
 पर प्रभुभक्त भील मत्त नाल का जातीय आनन्द मनाने लगे।
 एक, नाचमत्त भक्त भील ने स्वरक्त की राजुटीका से बप्पा का
 ललाट रंग कर उसे नरेन्द्र के शून्य सिंहासन पर बिठाया।
 से अजित तक बप्पा के वंश वाले राणाओं की टीका उसी रीति
 पर होती आई है। उसी भील का वंशधर अब तक निज शरीर
 चीर कर युवराज का ललाट चिह्नित करता है; युवराज को सिंहा-
 सन पर बैठाकर राणा बनाता है। उस भील का नाम बलेब
 था। कृतज्ञ राणाओं की कृपा से बलेब के वंश वाले आज सौ
 ग्रामों के अधिकारी होकर पूर्ण स्वाधीनता भोग रहे हैं। स्वयं
 राणाओं ने तो अब अङ्गरेजी आश्रय स्वीकार कर लिया है।
 किन्तु बलेब के वंशवाले पूर्ण स्वाधीन बने हुए हैं। इन बनचर
 भीलों के सिवा अब भारत का कोई भी राजा प्रज्ज सच्चा स्वा-
 धीन नहीं है। बलेबवंशी भील-राजा भी, राणा नाम से प्रसिद्ध
 है। लक्ष्मणराणा ने नवीन राणा के तिलकोत्सव के लिये बड़े ही
 सत्कार से सबसे पहले भील राणा को नेवत्ता दिया।

इधर लक्खा राणा चन्दा को राणा बनाने की तय्यारी करते थे। उधर अभिषेक के पूर्व दिन चन्दा मुकुलजी को मकान में ले जाकर राणा बनते समय की शिक्षा देते थे। सिखा पढ़ा कर चन्दा ने बालक से पूछा,—“ ब्राह्मण आशीर्वाद करेंगे, तो क्या करोगे ?”

बालक—फललाम ।

चन्दा—क्षत्रियों से क्या करोगे ?

बालक—लामलाम ।

चन्दा—और लोगों से क्या करोगे ?

बालक—(हाथ चठाकर) ये कलेंगे ।

पाँचवाँ अध्याय

आज कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी है। आज ही यवनों के विरुद्ध युद्ध यात्रा का दिन है। आज मेवार भर के वीर चित्तौर नगरी में इकट्ठे हुए हैं। बारह वर्ष के नन्हें बालक से लेकर अस्सी वर्ष के निरे घूढ़े तक अस्त्र शस्त्र लेकर आये हैं। तलवार धामने की शक्ति होने ही से मेवारी वीर युद्ध के योग्य होते हैं, तलवार धामने की शक्ति रहते मेवारी क्षत्रिय युद्ध के अयोग्य नहीं होते। युद्ध ही उनका ध्यान, युद्ध ही उनका ज्ञान, युद्ध ही उनका प्राण है। युद्ध का नाम सुनते ही उनकी नस नस में कैसी एक न्यारी उत्तेजना की विजली फिरने लगती है। विशेषकर विधर्मी म्लैच्छों से लड़ने की आशा तो असामान्य धर्म लाभ की सजीव मूर्ति सामने लाकर उनके शरीर मन आत्मा को उछालने लगती है। राणा की अलंघनीय आज्ञा के उपरान्त ऐसी ही आशा के अनुराग से उत्साहित होकर आज मेवार के सभी वीर चित्तौर में एकत्र हुए हैं।

तब तक मेवार के विशाल उदर में राजस्थान के अनेक वर्तमान राज्य घँसे हुए थे। जब मुगल बादशाह बाबर दिल्ली प्रभृति विजय कर भारत में वंश परम्परा का स्थायी राज्य जमाने लगे थे, तब भी मेवार का विराट शरीर देखकर उनकी बहुत ही चञ्चल होमा पड़ी थी। उनका पक्का सिद्धान्त ही गया था कि,

भारत में मुसलमान नहीं रहेंगे; मेवार ही का शरीर बढ़कर सारे भारत में फैल जायगा; मेवार के राणा भारत के सम्राट होंगे।

ऐसे ही महाराज्य के समस्त वीर, राणाओं की सुवर्ण सूर्य से संयुक्त रक्त पताका के नीचे सम्मिलित हुए हैं। राणा के अधीनस्थ सभी नरेश-महाराजा, राजा, रावत, राव, ठाकुर—अपनी अपनी सेना सहित उपस्थित हुए हैं। चित्तौर में वीरों की भीड़ का पार नहीं है। नगर तो जन समूह के कलरव से भर ही गया है। नगर की आरों आर भी बड़ी दूर तक रंग बिरंगे खेमे अनोखी शोभा फैला रहे हैं। इस जनपूर्ण बख्त नगरी ने अपने असाधारण डील डौल से कई चित्तौर बना दिये हैं। सेना के सहायत्री हाथी, घोड़े ऊँट, खच्चरों का विराट ठाट देखने से दूसरे महाभारत का समारोह प्रतीत होता है।

युद्ध यात्रा से पूर्व राणा को आज पुत्र का तिलकोत्सव समाप्त करना है। इससे इतने समारोह की व्यवस्था हुई है। आज घर घर नव पुल्लव युक्त जल पूर्ण मंगल घटों की स्थापना हुई है। प्रत्येक चित्तौरवासी का गृहद्वार बन्दनवार की पवित्र शोभा धारण कर रहा है। प्रत्येक धनी गृह की अनोखी सजावट वीर मेवारियों के शिल्प अनुराग का नयन मनोहर बिम्ब प्रगट कर रही है; दरिद्र गृहस्थों के भी छज्जों पर मेवारी चित्रकारी का चमत्कार चमत्तम रहा है। आज घर घर मंगल चिन्ह सम्पद शोभा है; आनन्द कोलाहल है। सभी लोग तिलकोत्सव का आनन्द मना रहे हैं। किन्तु अभी तक कोई नहीं जानता कि किसका तिलकोत्सव होने वाला है। राणा ने केवल तिलको

सब की सूचना दी है। किन्तु किसका? तिलकोत्सव हो रहा है, सो नहीं जताया है। अभी तक राणा को भी मालूम नहीं है कि चन्द्रा राणा होंगे कि नहीं।

ऐसे गोरखधन्दे में पड़े पड़े मेवारवासी तिलकोत्सव का आनन्द मना रहे हैं; ऐसे ही गोरखधन्दे में पड़े पड़े राज्य भर के सभी प्रधान राजसभा में उपस्थित हुए हैं, औरों की बात दूर रहे, त्वयं राजेश्वर लक्खा राणा भी ऐसे ही गोरखधन्दे में पड़े हुए हैं। राणा ने राज सभा में राजकुमार चन्द्रा को बैठा हुआ देखा। चन्द्रा की बगल के आसन पर, शिशु राजकुमार मुकुल जी को भी देखा। किन्तु राणा को चन्द्रा के सङ्कल्प के विषय में कुछ भी सन्देह नहीं हुआ। क्योंकि चन्द्रा तो मुकुलजी को प्रायः नित्य ही यों ही अपनी बगल के आसन पर बैठाते हैं। और इसके उपरान्त राणा ने चन्द्रा के मुख पर मानों किसी स्वार्थ-मूलक परम शुभकाय के अपार प्रसन्नता भी झाँई हुई देखी। राणा ने एक प्रकार निश्चित कर लिया कि, चन्द्रा अपनी प्रतिज्ञा मूल गये हैं; वह आज राजसिंहासन पर बैठने की प्रस्तुत हुए हैं; उनके मुख की यह अनाखी प्रसन्नता उसीका सजीव लक्षण है। इस प्रकार सिद्धान्त में पहुँचने से राणा को आज आनन्द का भार नहीं है। कई दिन से कुचिन्ता के जिन काले बादलों ने राणा के मुख पर नैराश्रम की कालिमा भर दी थी, आज उनका चिन्ह दूक रह गया है।

निरालङ्कार सुफुल्लता का प्रियदर्शन स्वरूप धारण कर राणा ने कहा—“भाइया! मेवार के प्रधानों, आज मेवारवासियों के

लिये अनुपम शुभ दिन उपस्थित हुआ है। जिस युद्ध में विजय
 लाभ होने से क्षत्रिय की स्वर्गीय सुगन्ध संसार में फैल जाती है
 और मृत्यु होने से क्षत्रिय की आत्मा ज्योतिर्मयी मूर्ति में देव
 सुमन सिंहासन पर बैठ कर, गन्धर्वों के सङ्गीत तथा अप्सराओं
 का नाच देखती हुई सीधे स्वर्ग लोक को चली जाती है, आसुर
 हम उसी धर्म युद्ध की यात्रा कर रहे हैं। जब युद्ध यात्रा से राणा
 मेवार के क्षत्रियों में उत्साह की आग प्रज्वालित होती है, तब मनुष्य
 यवनों की हत्या के इस युद्ध से—अत्याचारियों से सतीकर
 धर्म रक्षा, तीर्थ रक्षा, करनेवाले इस धर्म युद्ध प्रज
 मेवार के दीर्घ मात्र उत्साह की अग्नि मूर्ति क्यों न बंकी
 कदाचित् मेवार के लिये आज से बढ़कर पुण्य दिन कभी न
 हुआ था।”

राणा की उत्साहपूर्ण वाणी ने क्षत्रिय मात्र के चेहरे पर
 असामान्य उत्तेजना की सुनहरी कलई लगा दी। सभी
 क्षत्रियों मानों फूल उठी। युद्ध यात्रा का पल पल भर का बिल हो
 सबको मानो भारी मालूम होने लगा। राणा फिर कहने लगे गये
 “भाइयो! युद्ध यात्रा से पहले आज हमको और एक शुभ कार्य
 करना है। आप लोगों को अवश्य ही उसका संवाद मिल
 होगा। वह शुभ कार्य इस राजसिंहासन पर मेरे पुत्र को बैठाना
 का है। युद्ध काल में जीवन मरण का निश्चय नहीं रहता।
 यदि इस युद्ध में मेरी मृत्यु हो, तब तो राज्याधिकारी का प्रतीक
 बन है ही—और यदि जीव बचे, तो भी पुनर्धारण का शक्य
 के भाड़े में पड़ने की इच्छा नहीं है। जीने की दशा में जीने

अन्तिम दिन तक एकान्त में भगवद्भजन करते रहने की पक्की प्रतिज्ञा कर चुका हूँ।”

राणा के बालेपन के सखा, यौवन के मित्र, सैकड़ों युद्धों में दाहिने हाथ, मेवार के सुसन्तान, अधीनस्थ भिन्डीर नरेश महाराजा सूर्यप्रताप ने मानो सभा भरका मुखपत्र बनकर कहा,—“महाराणा की आयु सौ वर्ष पाऊँ करे। इस युद्ध में यवनों का सर्वनाश साधन कर महाराणा दीर्घ जीवन भोग करें। राज्य त्याग कर एकान्ति वास करने से महाराणा की प्यारी मूर्त्ति का बिछोह प्रजा को बहुत गड़ेगा। किन्तु दुहापे की मुनिवृत्ति, महाराणाओं की प्राचीन रीति है। सो दुःख अधिक होने पर भी लोग ढारस धर सकेंगे। राजकुमार चन्दा भी प्रजा मात्र के आत प्रिय है; उनके सद्गुणों की चर्चा घर घर होती है। उनके सिंहासन पर बैठने से प्रजा को राजा के परिवर्तन तक का अनुभव न होगा।”

महाराजा सूर्यप्रताप के बैठते ही राजकुमार चन्दा ने खड़े होकर कहा,—“महाराणा कदाचित् भैरी प्रतिज्ञा की बात भूल गये होंगे। मैं नहीं, मेरे भ्राता मुकुलजी राणा होंगे।”

मानो भूवर शिखर पर एक बार ही सैकड़ों वज्र टूट पड़े। कदाचित् अपने सम्पूर्ण जीवन में लक्खा राणा इनने कातर कभी नहीं देखे गये थे। रोने की शक्ति जाती रही थी,—कदाचित् इसीसे रो नहीं रहे थे। हिलने तक की शक्ति हर गई थी,—कदाचित् इसी से गिर नहीं गये। मानो किसी रङ्गखोर कीड़े ने गुप्त भाव से शरीर में प्रवेश कर उनके चेहरे की चमक को भीतर ही घाट लिया; मानो किसी गौतम के व्रत-शाप से उनकी जीती

आगती, बोलती चालती हुई प्रसन्न मूर्ति देखते ही देखते सि-
 निश्चल ठोस पाषाण मूर्ति बन गई। राजकुमार चन्दा
 पर अपनी बात का यह प्रचण्ड प्रभाव देख कर बहुत ही घ-
 राये। राजसभा के अन्य लोगों पर उनकी एक ही बात ने
 दो न्यारे असर पैदा किये थे, वह उनको देखने का अवसर न
 था। जो मनुष्य मुह से निकाली हुई एक तुच्छ पुरानी बात
 स्मरण कर पृथिवी के प्रसिद्ध राजसिंहासन पर बैठने का मुनिम-
 लुभावना स्वार्थ विसर्जन कर सकता है, वह मनुष्य है कि देवता
 किन्तु हाय ! यह स्वार्थशून्य देवता हमारा राजा नहीं होगा-
 हम कैसे अभंगो हैं। हृदय की एक ओर यह भक्ति, दूसरी ओ-
 र यह हताश्वास भर कर मेवार के प्रधान साथ ही भक्ति तथा शो-
 की जो न्यारी छवि धारण कर चुके थे, चन्दा वह एक बार
 देख नहीं सके। अपनी बात से पिता की कुगति होते देख
 बड़ी ही कातरता से राजकुमार चन्दा बोले "पिता ! पिता
 महाराणा ! कुपुत्र के कुदचन पर धीरज धरिये ! यदि मैं जान-
 कि, प्राज्ञा भङ्ग कर सिंहासन पर बैठने से केवल मैं ही महापा-
 में डूबूँगा—यदि इस महापाप से यावज्जीवन अनुताप के अन-
 से नित्य रत्ती रत्ती भस्म होते रह कर जीवनान्त होने पर केवल
 मैं ही कृमि कीटी से खलबलाते हुए विष्ठा कुण्ड में गिरूँगा,
 पिता ! आपकी प्रसन्नता के लिये मैं हर्ष पूर्वक वह भी स्वीकार
 कर लेता। किन्तु देव ! स्थिर भाव से विचारिये—“पुत्रे यशसि
 तोयेन नराणां पुण्यलक्षणम्”—ऐसे प्रतिज्ञा भङ्गकारी नीच स्व-
 के कुत्सित बन्धे, कुत्साकार कुपुत्र से पितरों की भी कैसी क-

होती ! यह सब विचार कर चित्त में ढारस लाइये, धीरे-धीरे, प्रसन्न हूजिये ।”

राजकुमार की इस श्वात की बिजली ने राणा के स्पन्दहीन शरीर में मानो कुछ प्राण ला दिया । अगणित जनपूर्ण विराट सभा में विषम सन्नाटे में दीर्घकाल सन्नाटा मनाकर राणा रोते हुए कुछ बोलने को समर्थ हुए । किन्तु ऐसा प्रतीत हुआ कि, मानो उनकी आवाज किसी महादिगम्बर के समाधिस्तम्भ से निकल रही है । राणा बोले—“मैवार के प्रधानों ! आज से मैं सदा के लिये राजसिंहासन त्याग देता हूँ । आप लोग नये राणा को गद्दी पर बिठाकर तिलकोत्सव का आनन्द मनाइये ।” यह आज्ञा देते समय भी लक्खा राणा चन्दा का स्वत्व तोड़ने वाले मुकुलजी का नाम मुख से निकाल नहीं सके । यह आज्ञा देकर ही रोते हुए राणा राजसभा से चले गये । सभा के सब लोग खड़े होकर रोते हुए राणा को बिदाई का यथायोग्य अभिवादन करते थे, सिर झुका कर तथा हाथ उठाकर उसका प्रतिउत्तर देने के समय चारों ओर ताकते हुए उचित सज्जनता दिखाने की शक्ति राणा की आँखों में नहीं थी ।

राणा के जाते ही चन्दा छार मार कर रो उठे । सभा के सभी लोग अवाध आँसुओं से हृदय का विषम आवेग प्रकाश करने लगे । मैया के रोते देखकर शिशु मुकुलजी भी रोने लगा । मैयाजी पर तन मन लगाया हुआ शिशु यदि समझ सकता कि, मैया अपना सर्वनाश कर मुझे राज्येश्वर कर रहे हैं, तो कदाचित् आज वह भी पिता की भाँति क्रूर होता । दीर्घकाल से राज्य

करने वाले नरेन्द्र के सिंहासन त्यागने से प्रजा की जो हृदयवेदना होती है,—विलायत के प्रथम चार्ल्स की भाँति अत्याचारी नरेन्द्र के भी विसर्जन से प्रजा के चित्त में जैसी प्रतिक्रिया की खलवली उठने लगती है, यदि मुकुलजी में उसको भी अनुभव करने की शक्ति होती। तो भी वह आज मेवारी प्रजा की भाँति रोने लगता। यदि पिता के सिंहासन त्यागने का शोक भी अनुभव करने की शक्ति उसमें आई होती, तो भी यह चन्दा की भाँति रोने लगता। किन्तु चार वर्ष कइ महीनों के शिशु को ये सब अनुभव कैसे आवें? वह केवल भैयाजी को रोते देखकर ही रोने लगा।

सब से प्रथम रोने से सम्हल कर चन्दा ने सभासदों से कहा कि, अब शुभ कार्य का विलम्ब होना नहीं चाहिये। शुद्ध-यात्रा में विलम्ब पड़ जायगा। सो कुछ ही काल में मङ्गल अनुष्ठानों का आरम्भ हुआ। बमों की विकट गर्जन से चित्तौर नगरी में भूकम्प के झोके का अनुभव होने लगा। नगाड़ों की गुरुगम्भीर गड़गड़ाहट मानो नगर वासियों के हृदयों में प्रतिध्वनित होने लगी। यों ही गाजे बाजे की असामान्य धूम के साथ मेवार के प्रधानों ने बालक से नगर की प्रदक्षिणा कराई। जब मुकुलजी नियमित रीत्यानुसार सिंहासन पर बैठे, तो सबसे पहले हर्षपूर्ण अंतःकरण से राजकुमार चन्दा ने उनका अभिवादन किया। सात वर्ष पूर्व मेवारवासियों में जिस आश्चर्य से निःस्वार्थ प्रतिष्ठा की स्वर्गीय ध्वनि सुनी थी, आज प्रतिष्ठा की ध्वनि ने उनके चित्त में उससे कम आश्चर्य नहीं उभारा। सब लोग आँख

फाड़ कर दार दार उस स्वाथे-शून्य प्रेममूर्ति का अवलोकन करने लगे।

राजटीका का उत्सव हो जाने पर लक्खा राणा ने २५ हजार चुने हुए मेवारी वीरों के साथ युद्ध यात्रा की। गुरुकुल जी तथा राजपरिवार के लोगों सहित जाकर चन्दा ससैन्य राणा को भगवान एकत्रिंशदेव के मन्दिर तक पहुँचा आये। पिता पुत्र में बिदाई का मिलन बड़ा ही गम्भीर भावोद्दीपक हुआ। चन्दा को गले लगा कर वृद्ध राणा रो रहे थे। चन्दा की आँखों से भी सावनी वर्षा धारा विगलित हो रही थी। दोनों के हिलते होठ तक भी शब्द नहीं निकाल रहे थे। किन्तु निवोक अश्रुधारा मानो सहस्रों जिह्वाओं से उनके हृदयवेग का परिचय दे रही थी ! चन्दा मानो कह रहे थे:—

पिता स्वर्गः, पिता धर्मः

पिताहि परमन्तपः।

पितरि प्रोक्षिमापन्ने

प्रीयन्ते सर्व देवता ॥

जो पिता स्वर्गरूप, धर्मरूप, परम तप स्वरूप हैं, जिनकी प्रीति होने से सब देवताओं की प्रीति होती है, हाय ! उनके हृदय में मैंने कैसी कठिन व्यथा पहुँचाई है। युद्ध में विजय लाभ कर कब वह लौट आवेंगे ? कब शरीर मन की पूरी शक्ति से उनकी सेवा कर मैं चित्त का यह विषम ताप मिटा सकूँगा ?

राणा मनो कह रहे थे:—

बेटा ! तेरे गुणों की सीमा नहीं है, कितने ही जन्म जन्मा-

न्तर के अनन्त पुण्यबल से तेरे समान पुत्र मिला है ! मनुष्यों में तेरे समान स्वार्थत्याग सम्भव नहीं हो सकता । देवों में भी ऐसा निःस्वार्थ व्यवहार विरल है । तेरे नरोत्तम, देवोत्तम चरित्र की अलौकिक महिमा से शरीर मन आत्मा की सभी ठौर—आदि अन्त मध्य—एक बार ही परिपूर्ण हो गई हैं । हृदय की सारी हितेच्छाओं से शुभ आशीर्वाद करने की प्यारी अभिलाषा रोम रोम में समा रही है । किन्तु क्या आशीर्वाद करूँ ? विश्व-संसार जिस आशीर्वाद की प्रार्थना करता है, उस आशीर्वाद की वस्तु को तूने तृण से भी लघु तुच्छ खिलवाड़ समझ कर एक बच्चे के गले लटका दिया ! सो अब यही प्रिय कामना है कि, तेरी इस कीर्ति की शंखध्वनि संसार में फैल जावे । तेरे चरित्र की चिरपूजा मनुष्य मात्र के हृदय मन्दिर में मनाई जावे !

यों ही भावोदीपक अश्रुमय प्रेमालिङ्गन दीर्घ काल तक मना कर पिता पुत्र अलग हुए । लम्बा राणा ने मुकुलजी को गले लगाकर उससे पूछा—“बेटा, तू मेरे साथ जायगा ?”

मुकुलजी ने चन्दा की ओर उँगली दिखाकर कहा—“नहीं मैयाजी के साथ लूँगा ।” शिशु के मुख से यह प्रिय वाणी सुन कर राणा का हृदय और भी उछल उठा । उन्होंने शिशु के कुसुम-कोमल तलाट को उष्ण चुम्बनों से अभिषिक्त किया ।

छठवाँ अध्याय

सुभागों के सौभाग्य की गति भादों की गंगा की भाँति अटल वेगवती होती है। मारवाड़ नरेश की कन्या कमलावती इस समय बीस ही वर्ष की युक्ती है इसी अवस्था में वह मेवार की राजेश्वरी होकर राजमाता हुई है। कमलावती कहाँ चन्दा की पत्नी होने वाली थी और कहाँ लक्खा राणा की महाराणी हो गई। सौभाग्यवती कमलावती जब व्याइ आई, तब चन्दा की जननी पटराणी जीती थी। थोड़े ही दिनों में उसका देहान्त हो गया। तब तक युवपि राणा की और कई पत्नियाँ जीवित थीं, किन्तु उनमें से कोई भी कमलावती की भाँति उच्च कुल की राजकन्या नहीं थी। सो उन्नति का पथ साफ़ हो गया ! बूढ़े राणा की प्राणप्यारी युवती राणी कमलावती एक बार ही मेवार की पटराणी हुई। पूरी उन्नति की एक वाया तब तक भी बनी हुई थी। यदि कमलावती के पुत्र न होता, तो चन्दा ही राणा होते। किन्तु सौभाग्यवती ने पुत्र जन कर वह बाधा भी हटा दी। मुकुलजननी कमलावती इस थोड़ी ही अवस्था में मेवार की राज्येश्वरी राजमाता हो गई। बालक राणा की माता का सर्वशक्तिमती स्वामिनी समझना मेवार का प्राचीन प्रथा है। सो मेवार के विशाल राज्यभर में इस समय कमलावती से बढ़कर शक्तिशाली कोई नहीं है। यह बीस वर्ष की कमलावती ही करोड़ों नरनारियों के भाग्यों की अनोखी विधात बनी है।

कमलावती की की देहजता आज कुछ कुम्हनाई हुई सी जँवनी है। सम्भ्रा के पीछे ही वह सेज पर जा पड़ी है। घर जैसा सजा हुआ है, महारानी भी वैसी ही सजी हुई है। दोनों की सजावट दीवालगीरियों की उज्ज्वल रोशनी में चमचमा रही है। छत की चित्रकारी लाल नीले, हरे पीले, गुलाबी, बैजनी भाड़ों की रंगीन रोशनियों में बड़ी ही न्यारी शोभा दिखा रही है। हूबहू फूलबूटे वाली उस अपूर्व नकली जामदानी पर खुली खिड़कियों की मुक्त पवन रङ्गीन रोशनियों को कभी गिरा रही है, कभी हटा रही है, कभी लाल को नीला, हरे को पीला, गुलाबी को बैजनी करती फिर रही है। पवन कभी कभी नीचे सुन्दरी की महीन जामदानी-चादर पर भी मिली जुली रोशनियों की एकाध झलक को घसीट लाकर रात के समय धूप छाया का चमत्कार दिखा रही है। नहीं तो दिवालगीरियों की चटकीली चमक को भेद कर ऊपर की रङ्गीन रोशनियों को आपही आप नीचे उतरने की शक्ति नहीं है। पवन और भी कुछ कृत्य कर रही है—सिरहाने की मेवारी फूलदानियों से फूलों के परांग चुपके चुराकर युवती की अलकावली से अठखेलियाँ खेलती हुई उसके अलसाये हुए सुकुमार शरीर पर भरभार बरसा रही है। पलङ्ग पर एक ही राणी पड़ी हुई है; संग मूसा की दीवार पर सैकड़ों राणियाँ लगी हुई हैं। सभी समान रूपवली, सभी समान बहुमूल्य वस्त्र आभूषणों से लदी हुई—अन्तर केवल इतना ही है कि, पलङ्ग पर की राणी अकेली पड़ी हुई है, दीवार पर की राणियाँ अपने अपने राणाओं के सहित बराज रही हैं। और जो कुछ अन्तर है, वह मेवार के महा

वीरों ने कठोर हाथों से कोमल कूचियाँ थामकर एक बारही मिठी
 ० दिखा है। यह अन्तर निर्जीविता और सजीवता वा है। दीवार
 के निर्जीव चित्र पलङ्ग के सजीव चित्र की भाँति सब प्रकार से
 सजीव ही प्रतीत हो रहे हैं।

कमलावती के पति परदेश गये हैं। दीवार पर की सौभाग्य-
 वतियाँ पतियों सहित विराज रही हैं। इस ईर्ष्या से बढ़ते हुए
 दिव्य ह ने तो कमलावती को विकल नहीं किया है ? नहीं नहीं,
 कमलावती की विकलता से केवल शरीर ही की विकलता जँच रही
 है। उसके मुख पर जो भिन्ता के चिन्हशून्य मृदुमधुर प्रफुल्लता
 छाई हुई है, वह मानो मुख के तरङ्गों से उछलते हुए हृदय को
 उधार रही है। आज कमलावती के शरीर से थकने के कारणा भी
 अनेक हैं। आज उसके पुत्र मुकुलजी का तिलकोत्सव हो गया है।
 ० आज उसके पति ने युद्धयात्रा की है। तिलकोत्सव के लिये राज्य
 भर के सरदारों की पालियाँ चित्तौड़ के राजभवन में उपस्थित हुई
 हैं। इन सभों का स्वागत करना, सब को उचित सम्मान से
 सम्मानित करना, राजेश्वरी के लिये कोई सामान्य परिश्रम का
 कार्य नहीं है। इसके उपरान्त पति को बिदा करने के लिये कई
 कोसों का चक्कर लेकर एकलिङ्ग देव के मन्दिर तक जाना तथा
 वहाँ से लौटकर सब पाहुनों के आराम की ओर ध्यान देते हुए
 फिरना असाधारण स्त्रियों के लिये भी थोड़े परिश्रम का काम नहीं
 है। सबेरे से इन कामों में घूमती रहकर सन्ध्या समय कमलावती
 इतनी थक गई कि, वह एक बारही अपने शयन गृह में आकर
 विस्तर पर जा पड़ी; कपड़ा के धी बदलने की देरी नहीं

गई। आज कमलावती के मृत से प्रसन्न रहने के कारण भी मनेकू हैं। उनका एकमात्र पुत्र आज मेवार राज्य का राजा हुआ है। गद्दे के अन्य दावीदारों के रहते भी वह बालक पुत्र गद्दी पर बैठा है। माता के लिये इससे अधिक आनन्द की बात और क्या हो सकती है ? फिर वह पुत्र जब तक बालक रहेगा, मानो कमलावती ही के मस्तक पर मेवार का राजकुत्र विराजित रहेगा, — उसकी आज्ञा से सैकड़ों राजा महाराजा, रावत, ठाकुर प्रभृति राजेश्वर कटमरने को प्रस्तुत होंगे; उसके मुख से एक छोटी सी बात निकलते ही मेवार की विजयिनी सेना पृथिवी में डावां डोल मचाने को उद्यत हो जायगी, इच्छा प्रकट होते ही संसार के रत्नमंडार के कितने ही “कोहनूर” उसके पैरों पर लोटने लगेंगे—इस प्रकार विषाद राजसिक सम्पद की सच्ची कल्पना अब अभिलाषावाली बीस वर्ष की नवयुवती के हृदय में अपार मुख की कैसी उत्ताल तरङ्गमाला बहा सकती है, वह सभी कोई सहज ही में अनुभव कर सकते हैं। देहमृणाल के कुम्हलाने पर भी आज ऐसे ही सुखसूर्य का निम्नल किशोरों से कमलावती का मुखकमल खिल उठा है।

सत्य ही राणी कमलावती लड़ी ही उच्च अभिलाषिनी है। जब अभिलाष ही के लिये नवयुवक राजकुमार के बदले वृद्ध राजेश्वर की पत्नी होकर कमलावती सुखी हुई थी; राजकुमार युवा है, तो क्या हुआ ? — उनकी पत्नी होने से कमलावती राणी होती कि नहीं तिसका ठिकाना ही क्या था ? राणा वृद्ध है, तो क्या हुआ ? — उससे विवाद होते ही कमलावती मेवार की मंडा-

राणी हुई। उच्च अभिलाष ही के लिये मुकुल को गजा कर पति के परदेश जाने से भी आज कमलावती सुखी हुई है; क्योंकि पति के परदेश न जाने से तो कमलावती बालक राणा की सर्व शक्तिमयी माता नहीं हो सकती। उच्च अभिलाष ही के लिये पति के कई दिन से उठे हुए चित्तविकार का सच्चा कारण समझने में समर्थ न हो कर कमलावती भय से एक बार ही अकड़ गई थी। राणा के नख सिख का पता न स नस में रखने वाली कमलावती ने जब समझ लिया कि, राणा के जी में चन्दा का राणा बनाने की तरङ्ग उठ रही है; तब पति को नयन बाण से वेध कर उनसे मुकुल के लिये कुछ विनती करने की इच्छा कमलावती के जी में समा गई थी। केवल एक बुद्धिमती सखी की बुद्धि में आकर ही कमलावती उस अनर्थ में पड़ने से बच गई थी। केवल एकमात्र बल लाभ ही अबला कमलावती के जीवन का लक्ष्य है। बल लाभ के लिये हृदय की सारी कोमल वृत्तियों को जड़ सहित उखाड़ने में कमलावती को तनिक भी सङ्कोच नहीं है। जिस स्वर्गीय प्रेम की अमृत विन्दु के लिये विश्वव्रह्माण्ड शून्य मार्ग को चातक की चञ्चल दृष्टि दौड़ा रहा है; जिस प्रेम की सिद्धि दूर रहे; सिद्धि की आशा भी हृदय में स्वर्ग राज्य स्थापन करती है, कमलावती के सम्मुख वह प्रेम कच्चे कोमल हृदय की कुत्सित कमजोरी है। केवल कमलावती ही क्यों, — वह तो सैकड़ों वर्ष पूर्व की आशिक्षिता अधूरी नारी है। आज कितने ही शिक्षा का घमंड रखने वाले श्रेष्ठ पुरुष केवल बल लाभ ही की उत्कट कामना से सहज कोमल वृत्तियों को जलाने के लिये हृदय में महाशमशान

की भयावनी चितामि बाली रहे हैं। आह ! क्या ही अनुपम मधुर मोहन मूर्ति है, देखो ही अनुमान होता है कि, इस मूर्ति के पवित्र हृदय में निःस्नेह विश्वप्रेम की निमेल हास्यमयी स्वर्गीय छवि विराजती होती। वह शिक्षापुष्ट कण्ठध्वनि भी वही स्वर्गीय गीत गा रही है। किन्तु भगवन् ! पाप पहुँच कर, उसके हृदय सरोवर में गोता लगा कर यह कैसी तुल्य भरी कीच देखते हैं। हरे हरे ! यहाँ क्या ही रक्तमयी बिकट विभ्रमस्ता विराज रही है। केवल बल लाभ के लिये, केवल पड़ोसियों पर प्राधान्य लाभ करने के लिये, "तुम बहुत बड़े हो"—केवल इतनी ही निरर्थक बात सुनने के लिये वे अभागे अपने हृदय को मरुभूमि बनाते हुए भीवान के प्रेमराज्य की प्रेमपरिपाटी में कितनी बड़ी बाधा डाल रहे हैं। बड़ाई लाभ होने पर अवश्य इन हतभाग्यों का क्षणिक आनन्द लाभ होता है किन्तु वह आनन्द भविष्यत में केवल गुरु निरानन्द उपजाने वाला है। आज राणी कमलावती भी ऐसा ही आनन्द लूट रही हैं। शयन गृह के निराले में उसके मुख से आभ्यन्तरिक आनन्द का फवारा मानों सैकड़ों धारों से बूट रहा है।

कमलावती का शयन गृह एक बार ही निराला नहीं है। कमलावती अपने शयन गृह में एक बारही अकेली नहीं है। पलङ्ग के पास बेलाग बेजोड़ सङ्गमरमर की बर्फ जैसी गच पर एक छोटी सी चौकी बिछी हुई है; चौकी पर एक निष्वाक निश्चय मूर्ति बैठी २ मांसें कमलावती के आनन्द का आनन्द लूट रही है। मानों वह मूर्ति मन ही मन कह रही है—“तेरी

बलइयां लूँ। तेरें चन्द्रमुख की हस है सी के लिये जान दे सकती हूँ।” देर तक चुपचाप रहकर, देर तक इधर उधर देखकर, देर तक उस मूर्ति की ओर ताककर कदाचित कमलावती की अल साई हुई देह में कुछ शक्ति आई। पड़ी ही पड़ी कमलावती बोली,—“चम्पा आज मेरी सारी त्रिपद बन गई।”

चम्पा का क्या परिचय दे ?—चम्पा कमलावती की दासी है। कदाचित दासी कहने से चम्पा को मानिहानि होती है। तो क्या चम्पा को कमलावती की सहेली कहें ? कदाचित सहेली कहने से भी चम्पा का ठीक ठीक परिचय नहीं होता। चम्पा को कमलावती की गुरुआनी कहना ही ठीक जँकता है। अथवा एक चम्पा ये तीनों ही हैं। पद में दासी, काम में सहेली, गुप्तगृह में गुरुआनी—इन तीन मूर्तियों में चम्पा कमलावती की सेवा करती है। राठौर की कन्या कमलावती से व्याह कर वहेज की सामग्रियों में लकड़ा राणा को यह चम्पा रत्न प्राप्त हुआ था। अभी से चम्पा मेवार के राजभवन को आबाद कर रही है।

हीरे की नोक से काच कटता है। चम्पा की बुद्धि की नोक से हीरे में छेद होता है। चम्पा के बुद्धि वज्र की महिमा से कमलावती क्षत्रिय राणा पति की मनमणि छेद सकी है। कभी किसी की व्याही स्त्री न होने पर भी अथवा बुद्धि बढ़ने के पूर्व ही पति को खोने पर भी, चम्पा व्याही स्त्रियों से बढ़कर व्याही स्त्रियों के नखरे जानती है। सुहागि का सेंदुर बिना लगाये ही चम्पा पति मनान की विद्या में सुहागिनों के कान काटती है।

सङ्कट में लटपटा कर कभी को, न जानें, क्या हो गई होती।
 केवल चम्पा की इसी चारु चातुरी ने ही उसको उबारकर सौतों
 का सरताज बना दिया। रूपवती की यौवन भील में विरक्त के
 हृदय हिमाचल को काटने की शक्ति कम ही है। उसमें तरङ्ग का
 सञ्चार कीजिये; भील को तरङ्गिणी बनाइये; करारे से अञ्जलराज
 कटने लगेंगे। युवती के यौवन तरङ्ग लाने की यह चातुरी चम्पा
 की जन्म से जन्मी हुई सहज विद्या है। चम्पा की इस दैव विद्या
 के बल से यौवन में तरङ्ग का रङ्ग लाकर कमलावती वृद्धराणा
 की संसार उदासी विगाड़ने में समर्थ हुई; वृद्ध के हृदय राज्य की
 अनोखी राणी बन कर उसने अपना पाया सब सौतों से बढ़ा
 लिया। विरक्त की अनुरक्ति यों इष्ट साधन कर और भी
 अधिक फल लाभ करने के लिये उसने अनुरक्त को विरक्त
 बनाया। तभी आज कमलावती राजराजेश्वरी राजमाता है। सो
 सौतान्य दासी होने पर भी चतुरा चम्पा कमलावती के लिये
 कंकयी की मन्थरा है; अकबर का वैराम है; विलियम का विस्मार्क
 है। श्रीमंती चम्पा की लटकीली बुद्धि नौका पर चढ़ कर कमला-
 वती संसार सागर पार कर रही है।

बचपन ही से चम्पा के पिता माता नहीं हैं, लाऊ चचा
 भी हैं, भाई बहन नहीं हैं, देवर सास ससुर कोई नहीं हैं।
 यों सर्व सम्बन्धों से हाथ धोई हुई बाल विधवा चम्पा को किसी
 से किसी प्रकार प्रेम प्राप्त नहीं हुआ और प्रेम ऐसी वस्तु है कि
 हृदय दर्पण पर इसका प्रतिबिम्ब पड़ने से हृदय में उसकी
 उत्पत्ति प्रायः नहीं होती है। सो किसी की प्रेम न पाई हुई चम्पा

किसी को प्रेम करना नहीं सीख सकी है। चम्पा का हृदय माँही बिना जल का जलाशय है, बिना सुधा का सुधाकर है, बिना पूर्ण चन्द्र की पूर्णिमा है। अत्रय ही चम्पा बहुतेरी पर बहुतेरी भाँति का प्रेम प्रगट करती है; किन्तु वह प्रेम केवल मतलब साथमें का जातुर्ग चक्र है? केवल एक ही विषय में यह रुझ भङ्ग हुआ है—रुखा बरभूमि से एक हरी कुञ्ज निकल पड़ी है; खारे समुद्र से मधुर गङ्गाजल का एक अनोखा फव्वारा फट निकला है; बरसाती आकाश के निपट काले अङ्ग में चमचमाती चपला की एक महीन रेखा खिच गई है। यह कुञ्ज, यह फव्वारा यह रेखा कमलावती पर चञ्चला चम्पा का अनुराग है। चित्त की इस गति ने चम्पा को सुखी किया है। चम्पा अब केवल अपनी ही चर्चा में डूबी नहीं रहती है वह कमलावती को भी सुखी करने के लिये दत्तचित्त होती है।

आज कमलावती के सुखसे सुखी होती हुई चम्पा ने जब कमलावती से विपद टल जाने की बात सुनी, तब चट मुख का रङ्ग बदल कर कहा,—“विपद टल कैसे गई? आज ही से तो खड़ी विपद आ पड़ी।”

कमलावती बड़ा ही आश्चर्य मान कर पूछने लगी,—“फिर विपद कैसी? मेघार की राजमाता की विपद कैसी?”

चम्पा ने कहा,—“राजमाता यदि गृहस्थ की बहू बन कर केवल भरपेट खा पीकर खुश रहे तो विपद नहीं है। अब राजमाता कैसी? हुने दिने की राणी अब मौत के बेटे की बाँदी हुई।”

“वा २० न सी।

अंगत कपाक... ०७३ १

॥ चम्पा की बात कमलावती की छाती में काँट की भाँति जा गड़ी। कमलावती चुपचाप पड़ी पड़ी सोचने लगी। क्षण भर पहले अटल सम्पद का स्वप्न देखती हुई कमलावती अब स्पष्ट दृष्टि से अपनी खराबी का सचा चित्र देखने लगी। देखा कि चन्दा ही तो अब मेवार के सच्चे स्वामी—राणा के भी राणा हैं। राणा मुकुलजी बालक हैं। अब वृद्ध राणा के समय से ही चन्दा सभी राज्यकार्य करते आये हैं तो चन्दा ही तो अब राज्य के प्रधान पुरुष होंगे। फिर मैं किस काम की राजमहता हुई? चन्दा के रहते मुझे कौन मानेगा? मेरी क्या खाक चलेगी। मुझे तो सचमुच ही चन्दा की बाँदी की भाँति दिन गँवाने पड़ेंगे। इस विपद से बचने का उपाय क्या है—उपाय क्या है? उपाय की बात सोच कमलावती बड़ी ही हैरान होने लगी। उपाय कुछ सूझा नहीं। कमलावती उपाय की बात चम्पा से छेड़ने वाली थी कि, इतने में एक लौएड़ी बाहर से चिल्ला कर कहने लगी—“भैयाजी महाराणा को लेकर महाराणी जी से मिलने आये हैं।” कुमार चन्दा को राजभवन के नौकर चाकर भैयाजी कहते हैं। चन्दा को इससे बढ़कर सम्मान के नाम से पुकारे जाने की इच्छा भी नहीं है। महाराणा अब मुकुल जी हैं। इन दोनों के आने की बात सुनकर महाराणा कपड़े सँवार कर बैठी। उपाय की बात मन में ही रह गई। मुखपर बेटों से मिलने योग्य हँसी की रेखा लाकर कमलावती ने उनके आने की आशा की। चम्पा वहाँ से खसक गई।

सातवाँ अध्याय

लक्ष्मी राणा के राज्यत्याग किये प्रायः तीन मास बीते हैं। कुमार चन्दा बड़े ही सुन्दर-सुन्दर नियम रचकर प्रजा का शासन पालन कर रहे हैं। अविश्य पिता के दिनों से ही चन्दा राज्य शासन करते आते हैं। किन्तु उन दिनों साधारण प्रजा को मालूम नहीं था कि, चन्दा से ही वे शासित होते हैं। चन्दा के उत्तम कार्यों की प्रशंसा उन दिनों बड़े राणा पर मढ़ी जाती थी। फिर चन्दा की भी उस समय हरेक बात में पिता की आज्ञा की श्रेयशक्ति थी। अब चन्दा पूरी स्वाधीनता की न्यायी फुर्ती से प्रत्येक कार्य का जिस प्रकार प्रशंसा योग्य निर्वाह कर रहे हैं, प्रजा भी उनको सब बात का एकमात्र कर्ता जानकर उसी प्रकार सहस्र मुख से उनकी सुख्याति कर रही है। सो चन्दा पर पहले ही लोगों की जो भाँति सञ्चारित हुई थी, उसका आकार अब उनके सर्व प्रसन्नकारी कार्यों से डाल पल्लव वाले महान वट वृक्ष का जैसा हो गया है। सभी लोग विचार रहे हैं कि अब मुकुल जी का मेवार, राजा रामचन्द्र की अयोध्या है। सभी लोग गद्-गद् चित्त से खमराज्य का सुख लाने वाले चन्दा की जय जय कार मनाते हैं।

सभी प्रसन्न हैं, सभी सुखी हैं—क्योंकि आशा पूर्ण होना ही सुख है। और सब को आशा से बढ़कर निश्चय नया नया

सुत्र भी मिल रहा है। आशा पूर्ण हुई है कि केवल दो प्राणियों की। कमलावती और चम्पा की आशा पूर्ण होना दूर रहे, — उनकी बड़ी चढ़ी आशा पर प्रचण्ड त्राघात हुआ है। आशा टूटने से उनके हृदय में जो विषम घाव हो गया है, उसकी वृद्धि चन्दा पर लोगों की भक्ति बढ़ने के साथ साथ, नित्य ही हो रही है। अवश्य ही चन्दा प्रत्येक गुरु कार्य में महाराणी कमलावती की सम्मति लेते हैं; नित्य सन्ध्या के पश्चात् मुकुलजी के साथ माता के दर्शन करने आकर सभी विषयों में कमलावती से युक्ति करते हैं; प्रत्येक राजाज्ञा पर कमलावती के ही हस्ताक्षर होते हैं; किन्तु तो भी कमलावती और चम्पा को लहमे भरके लिये कल नहीं पड़ती है।

जो मनुष्य जी में सन्तोष लाना जानता है, उसके लिये यह संसार सब सुख का आगार बन जाता है। यदि कमलावती विचार सकती कि, मैं तो नारी हूँ। बालक पुत्र के राज्य का शासन करने में अवश्य ही मुझे किसी पुरुष मन्त्री की सहायता लेनी पड़ेगी। चन्दा मेरे वही पुरुष मन्त्री हैं, ऐसा विचारने से कमलावती को कोई दुःख नहीं रहता। ऐसा विचार में समर्थ होने से कमलावती अपने को सब सम्पदा से सुशोभिता, राज-माता के अत्युच्च अधिकारों से सच्ची बलशाली, मेवार की पूर्ण अधिकारिणी महाराणी देख सकती और चन्दा भी वास्तव ही में ऐसा एक भी कार्य नहीं करते हैं जिससे अभिमानीनी के प्राणों में व्यथा लगे। किन्तु चन्दा के व्यथा देने के कार्य न करने से क्या होता है? उनके हर एक कार्य से महाराणी का हृदय खिन्न

जाता है। चन्दा यदि कमलावती की सौत के गर्भ से राजपुत्र होते, चन्दा यदि मेवार राजवंश के कोई न होते तो कदाचित् उनके कार्य कमलावती के इतने चतुश्शून्य न होते। अथवा यदि चन्दा के कार्य एक बार ही निर्दोष न होते—बाल वृद्ध युवा नर नारी मीत्र के इतने प्रिय न होते, तो भी कदाचित् कमलावती का दुःख इतना अधिक न होता।

किन्तु, यह क्या?—कमलावती जिधर ही कान फेरती है, उधर ही चन्दा की प्रशंसा उड़ रही है। मेवार भर में चन्दा की प्रशंसा गूँज रही है। राजभवन के गृह गृह में चन्दा की प्रशंसा फिर रही है। सौत के पुत्र की इतनी प्रशंसा क्या कोई भी नारी सह सकती है? जब भगवान् रामचन्द्र की भी सौतेली माता सह नहीं सकी थी, तो बेचारी कमलावती को क्या दोष दें? कमलावती मेवार राज्य को शत्रुपूर्ण देख रही है, राज्य भवन को शत्रुपुरी समझ रही है। मेवार की प्रजा की बातें दूर रहे, राजभवन के नौकर चाकरों की बातें भी दूर रहे—मानो कमलावती की खास लोण्डियाँ भी चन्दा से षडयन्त्र कर कमलावती के विरुद्ध खड़ी हो गई हैं। कमलावती अपने वासगृह को घोर येन्नादायक कारागृह समझ रही है।

राजभवन! तुम डह जाओ। तुम्हारा वह विशाल शरीर किस काम का है? तुम्हारा आकाश के बादलों को छूने वाला मस्तक आँखों में बेतरह गड़ रहा है! तुममें अपने भीतर बसने वालों तक की प्रशंसा करने की शक्ति नहीं है! तुममें अपने सौतिक तर्कों को सुखी करने की सामर्थ्य नहीं है, तुम ऐसे निकम्मे होने के

उपरान्त संसार को असामान्य, हानि पहुँचा रहे हो;—तुम्हें ही देख देखकर बालबच्चों के मधुर कलरव से हिलोड़ते हुए सुख सदन के लोगों को सन्तोष नहीं हो रहा है। तुम्हारे भीतर की दुःखवार्त्ता से अनभिज्ञ अभागे तुम्हारे भीतर व्यर्थ सुख की कल्पना कर चित्त की अमूल्य शान्ति बिगाड़ रहे है। मनुष्यों में तुम सुख की मृगतृष्णा पैदा करने वाले कुटिल धोखेवाज हो! जाओ जाओ, तुम डह जाओ! हे निकम्मे! हे कुटिल! हे सर्वदुःखदायी! हे दिल्ली के लड्डू! हे शान्तिहर! संसार का दुख और मत बढ़ाओ। लवण समुद्र में तनु डबोकर तुम अदृश्य हो जाओ। तुम्हारे चेहरे पर बड़ी चिढ़ आ रही है।

ऐसा सोचने वाला कोई नहीं था। चम्पा के सिवा और कोई महाराणी का महीं दुःख नहीं जानता था। चम्पा, सखीस्वामिनी महाराणी के दुःख स्रोत में डूबी रहती थी। कभी कभी सम्हाल कर प्यारी सहेली का दुःख दूर करने का उपाय सोचती थी। उपाय के लिये इधर उधर दौड़, धूप करती थी किन्तु केवल हताश होने के उपरान्त कुछ भी फल हाथ नहीं आता था।

कमलावती क्रमशः दुबली होने लगी है। कपोलों की गुलाबी फीकी पड़ने लगी। नवयौवन के अकुञ्चित ललाट पर पकी उमर की चिन्ता रेखा दिखाई देने लगी। चन्दा माता से बीचबीच में कारण पूछते थे। कमलावती हँसकर उत्तर देती थी,—“बेटा! क्या सब दिन समान बीतते हैं? अब उमर बढ़ रही। उसी के प्रभाव से ऐसा होता होगा।”

चन्दा! नहीं अम्मा! मुझे बड़ा डर है,—कोई रोग न हुआ

हो ! आप कहें, तो राजवैद्यजी को बुलावें ।

कमला ! नहीं वेटा ! राजवैद्य को बुलाना नहीं होगा । आज कन गर्मी का दिन है । गर्मियों में मेरा चेहरा कुछ बिगड़ता है । फिर आप ही आप आराम हो जाता है ।

केवल चन्दा ही नहीं, ऐसे प्रश्नकारी अनेक नर नारी प्रायः नित्य ही कमलावती को दकिये किया करते थे । उनके प्रश्नों का उत्तर द्धे देते, कमलावती को थकना पड़ता था । याद लोग जानते कि, ऐसे प्रश्न से महाराणी दिक हाती हैं, तो अवश्य ही कोई फिर नहीं पूछता । किन्तु जी में चाहे जो बात रहे, ऊपर से प्रसन्न बना कर लोगों को सन्तुष्ट करने की विद्या में कमलावती ब्रेजोड़ी थी जिन चन्दा को कमलावती अपने सब दुःखों का मूल समझती थी । उनके सामने भी हास्यमुखी बनी रहने की बहादुरी क्या थोड़ी थी ? जो हो प्रायः दिन भर यों भीतरी गर्मी के ऊपर से चन्दन लेप लगाकर कुम्भुर के पजावे की भाँति जलते रहने का दुःख क्रमशः कमलावती को असह्य होने लगा । चन्दा और मुकुलजी के मिलकर चले जाने के पश्चात् एक दिन गहरी रात को कमलावती चम्पा से बोली,—“चम्पा अब तो प्राण नहीं बचते हैं ।

चम्पा की आँखें डबडबा आईं । कुछ देर चुपचाप रो कर उसने कहा,—“महाराणी ! उपाय तो और कुछ नहीं सूझता है । राजकुमार चन्दा को राज्य से निकाले बिना कोई उपाय नहीं हो सकता है ।

कमला—निकालना ? निकालना:—निकालना कैसे सम्भव हो ?

चम्पा—असम्भव कुछ नहीं है; किन्तु यह काम बड़ा ही कठिन है। कदं दिन से मेरा मन एक न्यारी ह। ओर दौड़ रहा है।

कमला ! क्या, क्या, वह क्या है ?

चम्पा । मारवाड़ में खर्वर होने की इच्छा हो रही है । वे आकर इस विपद से बचावें ।

कमलावती के मुख पर फीकी हँसी चमकी और तुरत ही लय हो गई वह बोली,—याद मारवाड़ में लिखने से वे धावा करने कि हिम्मत भी करें, तो हमें केवल वाप भाई तथा स्वजनों के छिन्नमुण्ड देख देखकर हाहाकार करना होगा । पृथिवी में मेवारी वीरों का सामना कौन कर सकता है ? मेवार पर आक्रमण करना मानों पहाड़ से सिर लड़ाना है ।

चम्पा । नहीं, नहीं मैं चढ़ाई करने को नहीं कहती हूँ । युवराज योधसिंह यहाँ आवें । कुछ दिन यहाँ रहकर कौशलपूर्वक कुमार चन्ना को यहाँ से भगावें—बस इसके बिना कोई और उपाय ही नहीं है ।

कमलावती चिन्ता सागर में डूब गई । देर तक सोचने लगी । बड़ी देर तक चुप रह कर वह बोली,—“अच्छा चम्पा यह महाअनर्थ ही करूंगी,—भैया को यहाँ बुलाऊंगी । हाँ यहाँ करूंगी, चाहे जोहो । यह दुःसह चिन्ता अब प्राण खाये डालती है । किन्तु कैसे बुलाऊंगी ? द्वि कैत ले जादिगा ?”

चम्पा । सोही तो कठिन है,—किसकी कहूँ ? इस राज्य के

किसी को कुमार चन्दा की आज्ञा बिना अन्य राज्य में भेजना सम्भव ही नहीं है। कुमार ने मानों जादू से सब को वश कर लिया है। और तो उधर रहे,—एक दिन एक काम से निकाले हुए कारन्दे से मनबूझने के लिये राजकुमार का कुछ ऐसी ही निन्दा की थी। उसने डपट कर कहा,—क्या कुमार चन्दा का दोष है?—फिर ऐसी बात भी कहना। मैंने ही दोष किया था, उसीकी सजा मिली है। सो भेजने के लिये किसे टहरावें? बड़ी भारी कठिनाई सूझ रही है।

आगे फिर चुपचाप दोनों बीड़ी देर तक सोचने लगीं। बड़ी रात हुई, राज भवन की घड़ियाल में दोपहर के घण्टे बजे। चम्पा ने मानों नींद से जाग कर कहा,—“महाराणी! आज रात बहुत हो गई। मुझे एक राह सूझी है। आप कल चिट्ठी लिख रखना। कल रात को मैं एक खेल खेलूंगी।

आठवाँ अध्याय

चम्पा के घर में आज बड़ी धूम है। चम्पा एक बड़े आइने के सामने बैठकर अपना बाल गूँथ रही है। उसके पास कटोरी में फुलेल, रकेबी पर उबटन, शीशी में अतर, कंघा कंधी, कौशली हाथ के कंधे के कई बार केशों से मिलकर विशाल केशराशि को हाथ के फन्दे में फँसा दिया। बेणी बनाने की सफाई भी क्या ही अच्छी है। बेणी बनी, जूड़ा बँधा इधर उधर के एकाध हट्टे हुए केश फिर कंधी से फँस कर अपने अपने स्थानों में आये। मुख पर उबटन की लिपाई पोताई मलाई हुई। उबटन के साथ मुख का मैल गमले के गर्म पानी में पधराया गया। गर्म जल में भीगे अङ्गूठों की रगड़ से मुँह के साथ हाथ, पैर, शरीर—सब की सफाई चम्पा की मनमानी हुई। सुडौल नाक में चमचमाती हुई फुल्ली की चटक आईने में देख कर चम्पा ने जी का सन्तोष मुस्कान से प्रकाश किया।

कहिये तो पाठक ! चम्पा की उमर कितनी होगी। पुरातन कवि षोडशी का बड़ा आदर कर गये हैं। मैथिल कवि विद्यापति "शैशव यूवन दुहुँ मिलि" जाने की मधुर सन्धि पर रीझ चुके हैं। किन्तु प्रिय पाठक ! किसे पसन्द करते हैं ? षोडशी युवती अच्छी है कि षोडशी किशोरी अच्छी है ?—किशोरी के आध-

खिले मुख-सरोज का नित्य सङ्कोच प्राण में मावों की तरङ्ग उछालता है। धरती को अपना भार जानने न देकर, आहिस्ते पग पग पर रुक रुक कर आभा और मानों सास तक बिना छोड़े विस्तर से मिल जाना, हाथ पकड़ते ही किचाड़ में चिपक जाना घूँघट उठाने से सिकुड़ कर इतनी स्त्री होकर मुदी हुई आँखों को नाचे कर लेना—कलिका किशोरी की यह कोमल लाजलीला बड़ी ही मनोहारिणी है। किन्तु तो भी मानों जी पूरा नहीं भरता है,—किशोरी में कैसी कुछ कसर जँचती रहती है और उधर षोडशी मदमाती, यौवन की उछाल से उछलती, पदभार से धरती को कँपाती पास आती है। दोनों तटों की सीमाओं तक लबालब बरसाती नदी की भाँति भरी पूरी गजगामिनी षोडशीं, अङ्ग अङ्ग में यौवन जलधिजल की ललित लावण्य छटा मल कर रोमरोम में प्रफुल्लता भर देता है; किन्तु तो भी मानों मन नहीं भरता है,—यौवन की वह जङ्गी वीरगति हृदय में कैसी खटकती है। यदि युवती की यौवनतरु छाया की निर्मल शान्ति चाहते हैं, तो बीस से आगे चलिये; तीस से मत डरिये हृदय शीतल हो जायगा; कलेजे पर आनन्द की अक्षुधारा बरसेगी। चम्पा की उभर इसी मधुर तीस पर आ लगी है।

तीस के उन तने हुए तैयार अङ्गों पर गहने क्रमशः सुहावे लगे। सिर पर कटियाँ, बेनाबन्दियाँ, भूमर सुहावे; कानों में बालियाँ पत्ते लटके, कणफून भुमके भूल बाले बिजलियाँ चमकी; गले में चम्पाकली पंचलड़ी बिलगिरी मोहनमाला, हमेल बड़ी के ऊपर कण्ठश्री की अनाखा उयाती चमचमने लगे बालियाँ

उँगलियों को नख तथा हाथों के तलवे तो पहले से मेहदी के मोहन
 राग लिए ही हुए थे—अब उन चम्पा कलियों की भाँति सुबौल
 उँगलियों पर आरंसी अँगूठों की न्यारी माधुरी झलकाने लगी।
 कलाइ में कूड़े, छन, पहुँचियाँ चूड़ियाँ आपस के मिलन से छुन
 छुनाने लगीं; हाथ के ऊपरी भाग पर बाजूबन्द जोशिले विजायत
 बिराजने लगे; उनकी मोस्तियों से लूथी हुई चञ्चल घुण्डियाँ हर
 एक लटक के साथ साथ संसार को लय करने लगीं; शरीर में
 चोली, चोली के नीचे घाँघरा, घाँघरे पर सेला, सेले के ऊपर
 चादर सुहाई—अरे ! इस निगोड़ी चादर ने तो सत्यानाश किया।
 उसने कसी हुई चोली की अनोखी शोभा—मोस्तियों बेल, मुक्केश
 जैरी, बादले, गोटे की बिलग बिलग बलिहारी बहार—सब
 तेवली। नहीं नहीं, सत्यानाश क्या किया ? कुछ हानि नहीं
 रहो—चादर ! तुम जहाँ की तहाँ ही बनी रहो। तुम्हारे ऊपर से
 तो आँखें हटा ही नहीं सकते हैं,—अहा ! क्या ही सुन्दर, क्या
 ही अनुपम, क्या ही महोमोहन हो ! निम्मल नीले आकाश में
 तारों के फूल फूले हैं,—कितने ही गुलाब, कितने ही बेले, कितनी
 ही चमेलियाँ, कितनी ही जुहियाँ, कितने ही हरसिङ्गार मोहन
 मुखों पर मुलायम ज्योति की झलकें मले हुए। बिराज रहे हैं,
 किन्तु निर्वकर्म की कोमल कारीगरी के इस विशाल आघार
 पर केवल एक ही चाँद की रचना हुई है;—इस से शोभा के
 कितने ही प्यासे शोभा की शराब पीकर पागल हो जाते हैं।
 और श्याम चादर ! तुम्हारे प्रिय प्रकाशमय अलन्त तारादल में
 सकेड़ा चाँद निहार रहे हैं; यो चाँदों की असीम चाँदनी में

बार ही डूब गये हैं ! नहीं नहीं, हो जाओ चादर ! तुम जहाँ की हाँ बनो रहो !

क्यों पाठक ! अब भी तीस वर्ष पर कुछ आक्षेप है ?— यदि हो, तो वह सुनिये, प्राण हाने वाले पायजेवों की झुनझुनाहट सुनिये; कड़े छल्लों की छनछनाहट से मिली हुई इस झुनझुनाहट की बराबरी, कोन सी बिन सितार की झङ्कार कर सकती है ? हाँ हाँ, रङ्ग की बात नहीं कही । गोरे रङ्ग का बड़ा दबदबा है । किन्तु विलायती गोरेपन की धवली चटक आंखों में चकाचौंध लंगती है; ईरानी गोरेपन की गुलाबी की कमी दिखाई देती है, यहूदी गोरेपन में कैसी एक कटीली रौलक भरी हुई है । हिन्दुस्तानी काले कवि “तन्वी श्यामा शिखरदशना पक्वबिम्बा धरोष्ठी” पर मोहित हो चुके हैं । पाठक ! क्षमा कीजिये— कदाचित् आपके गृह की मधुरता भी ऐसी ही श्यामा की मोहनी छटा से बढ़ी होगी । वस्त्र आभूषणों से बनी ठनी चम्पा ऐसी ही श्यामा है, ऐसी ही शिखर दशरुण है, ऐसी ही पक्वबिम्बा धरोष्ठी है । तो भी कदाचित् आक्षेप न मिटा होगा—श्यामा दासी है । किन्तु इस बात से जितना आक्षेप होगा, वै बड़े ही मीरस गिने जायेंगे । “स्त्रीरत्नं दुष्कुलादपि”—कीचड़ में पद्म होता है, कोयले की खान में हीरा होता है, काँक के बालों में कोयल होती है । सो दुष्कुल से क्या हानि है ? और दुष्कुल ही का सिद्धान्त भला कैसे कर लिया गया है ? क्या दासी मात्र ही दुष्कुल की होती है ? यदि यही हो तो मेवार की महारानी की दासी भी क्या दुष्कुल ही की होगी ? ऐसा सिद्धान्त न सन्नेह

अनुचित है। किन्तु चम्पा विधवा जो है! यही तो कठिनाई है। नहीं-नहीं, विधवा पर दृष्टि न दीजिये। दृष्टि दिलाने के लिये भी उसका स्वरूप चित्रित नहीं किया है। विधवा चम्पा यों बन ठन कर कहाँ चली है, सो ही देखने के लिये इतना लिखने की जरूरत हुई।

चम्पा चली, राजभवन के सब दरवाने खोले पार करती हुई बाहर चली। कितने ही स्थानों के पहरेदार सन्देह की दृष्टि से चम्पा की ओर ताकने लगे। किन्तु चम्पा के एक अँगूठी दिखाते ही सब सिर नांय कर उसको राह देने लगे। अँगूठी स्वयं महाराणी कमलावती की थी। रात्रि को भवन से किसी को निकलने की आज्ञा नहीं है। इसी से चम्पा महाराणी की अँगूठी संग्रह कर लाई थी। अँगूठी के सहारे चम्पा राजभवन के बाहर तक चली आये। चम्पा और भी आगे चली।

दो बड़ी रात हुई होगी। चौथ की चाँद हँसियों की भाँति आकार लेकर आकाश के पश्चिम प्रान्त में तिरमिरा रही है। धरती की उमड़ी धूल की आड़ में पड़कर दुबले चाँद की महीन रेखा बड़ी ही फीकी हो गई है; वह रेखा भी बीच-बीच में भू-बादलों के घने पर्दे में छुपकर अदृश्य हो रही है। दैवी दीपक की यह दुर्बलता देखकर उसे एकबार ही दबाने के लिये पूरब की अँधेरी विकट मुख बाय रही है। चाँदनी रात की इस अँधेरी में चम्पा कहाँ जा रही है?

तो क्या चम्पा का चित्रित आकार नहीं है? ऐसे समय इस दृष्टि से घर के बाहर होनेवालों के चरित्र पर सन्देह होता ही है।

अच्छा, चम्पा ने महाराणी की अंगूठी कैसे संप्रद की? यदि महाराणी ने आप ही दी होती, कदाचित्त महाराणी को भी चम्पा की इस नैश यात्रा का हाल मालूम है। यदि महाराणी को मालूम हो तो इतने शीघ्र चम्पा के कुचरित्र का सिद्धान्त कर लेना ठीक नहीं है। किन्तु यदि चोरी से अथवा कौशल पूर्वक अंगूठी निकाल ली हो, तो सन्देह वास्तव ही में बड़ा घना हो जाता है। क्या इतना साहस चम्पा को हुआ होगा? दुश्चरित्रा स्त्री को साहस की कमी ही कब हो सकती है? किन्तु सन्देह का कारण यथेष्ट हीने पर भी केवल इतनी ही बात से कुचरित्र का सन्देह करना उदार पुरुष का कर्तव्य नहीं है। जो हाँ, छुपकर चम्पा के पीछे जाने से ही सारी बात खुल जायगी।

राजभवन से थोड़ी दूर पर एक बड़ी भारी पाठशाला थी। उसमें श्रुति स्मृति दर्शनों का पठन पाठन होता था। महाराणा गण भरतवर्ष की चतुर्दिशा ज्ञान कर श्रेष्ठ परिद्धत संग्रह करते थे। उनके द्वारा मेवार के ब्राह्मणों को ब्राह्मण बनाये रखने की चेष्टा होती थी। वे परिद्धत इस पाठशाला में विद्यार्थियों को पढ़ाते थे। वे विद्यार्थी परिद्धत होकर मेवार के गाँव गाँव में पाठशाला खोलते थे। इन पाठशालाओं की कृपा से कोई भी ब्राह्मण-सन्तान विद्या चर्चा बिना किये बच नहीं सकता था। फल यही होता था कि, ब्राह्मण कुल का बिकट मूर्ख भी कुछ पढ़ा हुआ होता था। ऐसे ही एक परिद्धत कुलध्वज शास्त्रार्थ के लिये उन दिनों चित्तौर में आये हुए थे। इनका नाम था लम्बोदेर लण्ठाचार्य।

लम्बोदेर का लम्बोदेर नाम साथ ही हुआ था। शंभर के

सब अङ्गों का मास-उदर में जालगा था। और सब अङ्ग बिना मास के चमड़े से ढकी हुई हड्डियों के बने हुए थे; उदर की परिधि दो गज से भी कुछ अधिक थी। अवश्य इससे लम्बोदर के शरीर को दुबला पतला नहीं कहना चाहिये; क्योंकि शरीर का वर्गफल किसी मोटे मनुष्य की देह के वर्गफल से कम न था। लम्बोदर जिन दिनों गर्भ में विराजमान थे, उन दिनों उनकी माता ने पोथी लिखने की स्याही की कोई खाने की वस्तु जानकर खा लिया था। इसी से लम्बोदर के शरीर पर स्याही की काली मलक अब तक बनी हुई थी। लम्बोदर के साथी विद्यार्थियों में से एक ने एक दिन उनको आते देखकर साथियों से कहा था,—“दधं काष्ठं तिष्ठत्यग्रे।” पण्डितजी लम्बोदर की बुद्धि पर मुग्ध होकर उनको लयँठ कहा करते थे। जब लम्बोदर पढ़ना समाप्त कर घर जाने लगे, तो पण्डितजी ने कहा,—“गम्यताम्॥” लम्बोदर ने अचकचा कर पूछा कि, गम्यताम् का अर्थ क्या है। एक सहपाठी ने बता दिया,—“सिर।” एक दिन लम्बोदर का सिर दर्द कर रहा था; माता रोटों खाने को बुला रही थी। चिढ़ कर लम्बोदर कहा,—अरी मूखे स्त्री पण्डित की माँ! गम्यताम् दुखे हं, रोटो नहीं खैहों। लम्बोदर ने गुरुजी से बिदा होते समय जब उपाधिका प्रार्थना की, तब गुरुजी ने उसको लण्ठाचार्य की उपाधि दी। तब से वह लम्बोदर लण्ठाचाये नाम से प्रसिद्ध होने लगे। उनका नाम इतना बढ़ा कि, जहाँ वह शास्त्रार्थ करने जाते थे, वहाँ के पण्डित लोग उनका नाम सुन कर ही परजय मान लेते थे। दिग्विजय करते हुए लम्बोदर चिन्तोर

आये। चित्तौर की पाठशाला गर्मियों में तीन मास बन्द रहती थी। लम्बोदर जब पहुँचे, तब पण्डित लोग घर जाने लगे थे। उन्होंने उनको देखते ही कहा, “आप से तो परास्त होंगे ही।” किन्तु शास्त्रार्थ इस समय नहीं हो सकना है। हम घर जाते हैं। लौटकर करेंगे।” तब से लम्बोदर पाठशाला के एक गृह में टिके हुए हैं। चम्पा वहीं चल कर उनके द्वार की सिकड़ी हिलाने लगी।

सिकड़ों की छनछनाहट पर बार बार—हूँ—हूँ हुम; हूँ—हूँ—हुम” की आवाज आने लगी। किन्तु सिकड़ी का हिलना बन्द नहीं हुआ। लम्बोदर भोजन कर रहे थे; भोजन करते समय बोलते नहीं थे। यह बात चम्पा नहीं जानती थी। वह—हूँ—हूँ—हुम” का अर्थ क्या समझे? लम्बोदर यों भोजन में व्यस्त रहने को जितनी सूचना देने लगे, चम्पा उतने ही जोर से सिकड़ी हिलाने लगी। लम्बोदर को बड़ा क्रोध आया। क्रोध से पानी पीने लगे, तो गल में लग गया। यह धाँय धाँय खाँसने लगे। चम्पा बाली—“किवाड़ खोलिये।” आवाज सुनकर लम्बोदर ने जाना कि, काँइ खा, किवाड़ खुलवाना चाहती है। किन्तु उस समय खाँस खाँस कर लम्बोदर क्रोध से एक बारही लाल हो गये थे। खाते समय के अभ्यास को भूलकर वह चम्पा पर क्रोध की आँसी फड़ने लगे। “कौन है री! चुड़ैल डाइनी—इत्यादि इत्यादि।” लड़कपन से स्त्रियों की जितनी गाली भीखी थी, सब बकते हुए यह हाथ मोतार लम्बोदर ने द्वार खोला। जब तक गालियों की बाँझार हो रही थी। किन्तु यह क्या?—द्वार पर यह कौन है?—

यह देवी है कि मानवी ? यह निःसन्देह कोई राजलक्ष्मी होगी !

इसी को लम्बोदर गारया रहे थे ?

मुँह की गाली मुँह में रह गई, घबराहट के मारे लम्बोदर थरथर काँपने लगे । कुछ कहने में असमर्थ होकर विकट भय से लम्बोदर रोने लगे । रोते हुए चम्पा के पैरों पर पड़ने को उद्यत हुए । ब्राह्मण को इस अकस्मात् भय से बचाने के लिये चम्पा ने एक घुड़की दी । घुड़क कर कहा, “यह क्या करते हैं ? चलिये भीतर चलिये ।” चम्पा ब्राह्मण को हटा कर भीतर चली । ब्राह्मण से किवाड़ बन्द करने कहकर आप खटिया पर जा बैठी । मानों मन्त्रमुग्ध बन कर लम्बोदर ने किवाड़ बन्द किया; आगे चम्पा से “यहाँ आइये” सुनकर वह खटिया के पास जाकर खड़े हुए । चम्पा बोली—“बैठिये ।” किन्तु केवल एक ही खटिया है, उस पर चम्पा बैठी है; ब्राह्मण बैठे कहाँ, चम्पा ने खटिया पर बैठने का इशारा किया । लम्बोदर फिर घबराये, किन्तु उनमें, न जानें क्यों, चम्पा की आज्ञा न मानने की शक्ति नहीं रही थी । वह खटिया के पैताने पर एक कोने में इतने से होकर बैठे । अब तक उनका भ्रम जाते देख कर चम्पा ने इधर उधर की फुटकल बाते देर तक पूछ ताछ कर ब्राह्मण को कुछ निःशङ्क किया । आगे बार बार न्यून बाख छोड़ती हुई चम्पा कहने लगी,— “आप बड़े भारी पंडित हैं । महाराणा को इसकी खबर लगी है । वह आपको लाख रुपये की भेंट देंगे ।” आनन्द से एक बार ही गद्गद होकर लम्बोदर बोले,—“सच कहो !”

इतना कह कर चम्पा ने दीपनी चाँदर कुछ हटाई। तिम
 टिमते हुए दिये की रोशनी में महीन चादर को भी भेद कर
 गहनों की झलक ब्राह्मण को दिखाई नहीं दे रही थी। चादर को
 यों हटाया कि, मानों वह आप ही आप खसक गई। गहनों की
 झलक के साथ साथ ब्राह्मण के जी में चम्पा के रूप यौवन का
 अच्छा प्रभाव होने लगा। ब्राह्मण को अब बात करने का साहस
 हुआ। पूछा,—आप कौन हैं ?”

चम्पा। मुझे आप न कहिये। मैं आपकी दासी हूँ।

लम्बो। आ आ-तु-तु-तुम क्यों आई हो ?

नीचे की ओर ताक कर हाथ मलती हुई चम्पा बोली,—
 “मैं आपसे एक भिक्षा मांगने को आई हूँ।”

लम्बो। मुझसे भिक्षा ? सो क्या है ?

चम्पा। मैं ब्राह्मण की कन्या हूँ। पिता माता के मरने पर
 मारवाड़ नरेश ने मुझे पाला था। महाराणी कमलावती मुझे
 बहुत चाहती है। उनके साथ मैं यहीं आकर तबसे यहीं हूँ। परि-
 चय से मालूम हुआ कि, आप मेरी ही जाति के ब्राह्मण हैं।
 जबसे आपको देखा है, मेरा मन वश में नहीं है। सो ही मैं
 आई हूँ। महाराणी ने भी विवाह की आज्ञा दी है।

यह कह कर चम्पा मट खटिया से उतर कर ब्राह्मण के
 पैरों पर पड़ी। वही पड़ी पड़ी कहने लगी,—आप मुझे पत्नी न
 बनावेंगे, तो मैं अभी मर जाऊँगी।”

लम्बो को यह सब कहते-कहते लगा। उनकी हथेली में
 मानो इन्द्र का स्वर्णराज्य आ गया। महाराणी से लाख रुपये की

मेंट और राजनक्षत्री की निहित इम दुर्लभ नागीरत्न की प्राप्ति का स्वरूप उसके मस्तिष्क को खलबलाने लगा। चम्पा को पैरों से उठाना वह भूल गये। चम्पा अपि ही उठा उठ कर ब्राह्मण की बगल में बैठा। ब्राह्मण का हाथ अपने हाथ में लेकर कहने लगी,—मैं समझ गई—आपकी सम्मति है।” आगे करस्पर्श से कण्टकित ब्राह्मण पर चम्पा प्रेमवार्त्ता की अमृतवर्षा करने लगी। लम्बोदर भी क्रमशः सहिस पाकर हृदय का आनन्द जताने लगे। यों ब्राह्मण को एक बार ही वशीभूत कर चम्पा बोली—“विवाह से पूर्व आपको एक काम करना है।”

लम्बो। जो कहोगी, सो करूँगा।

चम्पा। बड़ी दूर जाना होगा, न जाने आपका बिछोह कैसे सहूँगी।

लम्बो। जहाँ कहोगी, वहीं जाऊँगा।

चम्पा। यह बिछोह सहना ही होगा। मारवाड़ नरेश मेरे पालने वाले पिता हैं, उनकी आज्ञा बिना मेरा विवाह नहीं हो सकता है। सो उनकी सम्मति के लिये एक चिट्ठी लिख लाई हूँ। चिट्ठी उनकी देना। वह जो सम्मति की चिट्ठी दें, वह मुझे लाकर देना। न जानें, आपको कितना परिश्रम होगा।

लम्बो। नहीं नहीं कुछ परिश्रम नहीं होगा। मैं कल सबेर ही जाऊँगा।

चम्पा। ओ हो! आपको कितना कष्ट दे रही हूँ! आज ही रात को, अभी चलने से अच्छा होता।

लम्बोदर को लम्बोदर ही संभूत का विषय भय था।

रात को जाना होगा—एक बार लण्ठाचार्य को हृदय डोल उठा ।

किन्तु चम्पा की आज्ञा वह कभी बिना माने रह सकते थे ?
लण्ठाचार्य यात्रा के लिये प्रस्तुत होने लगे । चम्पा बराबर प्रेम
की बुकनी बरसाती गई । अन्त में लम्बोर को हिदा कर चतुर
चम्पा रीजभवन को लौट आई । कमलावती को चिट्ठी भेजने की
सफलता का पूरा वृत्तान्त सुना कर प्रसन्न किया । दोनों सखियों
की वह रात बड़े आनन्द से कटी ।

नवाँ अध्याय

दूसरे दिन प्रातःकाल की एक विचित्र घटना से चन्दा के चित्त में चिन्ता की ज्वालामुखी धड़धड़ाने लगी । चन्दा के सामने एक खुली चिट्ठी पहुँचाई गई । चिट्ठी पढ़ते समूय चन्दा को अनुभव होने लगा कि, मानो विश्व संसार डोल रहा है । किन्तु गम्भीर-हृदय चन्दा ने शीघ्र ही सम्भल कर चिट्ठी लाने वाले कर्मचारी से पूछा,—“चिट्ठी कहाँ मिली ?”

कर्मचारी बोला,—“कल रात को उत्तर फाटक पर मेरा पहरा था । अन्धकार में एक मनुष्य “भू—भू—भू” करता दौड़ा आया । वह इतना डरा हुआ था कि, और कुछ देर मनुष्य न देखने से कदाचित् गिर कर मर जाता । कुछ सुस्ताने पर उसने समझाया कि, भूतों ने उसका पीछा किया था । मैंने पूछा कि, इतनी रात को जाते कहाँ थे । उसने पहले अण्ड बण्ड धोखे की बातें बकना आरम्भ किया; शूली की धमकी देने पर वह काँपता तथा प्रायः रोता हुआ कहने लगा कि मैं कुछ नहीं जानता । एक स्त्री से मेरा विवाह होने वाला है उसने मुझे मारवाड़ भेजा है । रात्रि के समय यह सब विचित्र व्यवहार देखकर तथा सन्देह की बातें सुनकर उसकी गठरी का अनुसन्धान करना पड़ा । उसकी गठरी से यह चिट्ठी मिली । उसकी कैद में रख कर चिट्ठी लाया हूँ ।

चन्दा—चिट्ठी को खोला किसने ?

कर्मचारी—मैंने ही खोला है। पराई चिट्ठी खोलना अनुचित जानने पर भी सन्देहयुक्त रीति पर रात्रि के अन्धकार में भिन्न राज्य में जाने वाले के पास की चिट्ठी खोलना ही उचित जँचा।

कर्मचारी को पराई चिट्ठी खोलने के लिये डाँटने का अवकाश न मिला। चन्दा लहू में भर में सारी बात समझ गये।

समझ गये कि, क्यों दिन दिन महाराणी कमलावती रोगी की भाँति दुबली बन रही हैं; समझ गये कि, वह समय समय पर हिचक हिचक कर क्यों उनसे बातें करती हैं; समझ गये कि, उसके मुख की हँसी प्रायः बनावटी क्यों मालूम होती है। सब समझ कर वह अपना कस्तूरी स्थिर करने लगे। कर्मचारी को विदा करते समय कहा,—“यह चिट्ठी जाली है। उस मनुष्य को बिना बिलम्ब छोड़ दो। वह कोई मूर्ख जान पड़ता है।”

महाराणी के इस व्यवहार पर कहीं कर्मचारी को तनिक भी आश्चर्य न हो जावे,—इसी लिये सब समझने पर भी चन्दा ने उससे वैसी बात कही। उसके चले जाने पर चन्दा गहरे चिन्ता-सागर में डूब गये। पाठक ! कदाचित्त उस चिट्ठी को जान गये होंगे। वह वही पिता के नाम में महाराणी की लिखी हुई चिट्ठी था। चतुरा चम्पा का कौशल इससे पहले कभी इस प्रकार निष्फल नहीं हुआ था। मृत के भय से भीत लण्ठाचार्य की मूर्खता से सारी बात बिगड़ गई। महाराणी कमलावती की मोल

कष्ट हो रहा है ? नहीं नहीं अब उनका कष्ट रहने न दूँगा । आज ही मैं बिना विलम्ब राज्य छोड़कर अन्यत्र चला जाऊँगा । चन्दा सब से प्रथम राणी कमलावती से बिदा होने गये । उनसे बाले,—“अम्मा ! मेरे यहाँ रहने से आपको इतना कष्ट हो रहा है । सो मुझसे ही क्यों नहीं कहा ? पराये राज्य में इसके लिये चिट्ठी लिखने की क्या दरकार थी ? अब माँ ! तुम्हें कष्ट भोगना ही होगा । मैं अभी राज्य से जाता हूँ प्रार्थना इतनी ही है कि, भैया मुकुल की अच्छी रक्षा हो ।” यह कह महाराणी के चरण छूकर चन्दा बिदा हुए ।

चन्दा की बात सुनते समय कमलावती का मुख कुत्सित पड्यन्त्र प्रकाशित हो जाने की लज्जा से नीचा हो गया था । उस समय वह जी में कभी अपने को, कभी चम्पा को धिक्कार दे रही थी । वह चन्दा के प्रशान्त मुख के उदार भाव को देख नहीं सकी । सब बातों को भी भली भाँति सुन नहीं सकी । किन्तु जितनी बात सुनी, उससे चन्दा के जाने पर बार बार यह सोच उसको होने लगा,—“क्या यही चन्दा मेरा शत्रु है ?” यह सोचने पर भी कमलावती में चन्दा को बुलाने की हिम्मत नहीं हुई ।

चन्दा चले, सोते हुए बालक महाराणा के घर में जाकर हृदय के अतृप्त आशीर्वाद से चन्दा बार बार उसका सिर चूमने लगे । बालक सीता था । इसीसे चन्दा चले जा सके । नहीं तो बालक की छुड़ाकर चन्दा का चला जाना कठिन होता । चन्दा ने मेवार त्यागने से पहले केवल मात्र प्रिय मित्र सुमरसिंह से एक बात कही,—“भाई अब तुम्हें मेवार छोड़ना पड़ता है । काख

मत पूछो, बालक महाराणा की पैशा करो, तुमसे यही मैं तो
अन्तिम प्रार्थना है ।" सहस्रों प्रश्नों की बौछार करने की असह-
नीय इच्छा समरसिंह के जी में हो रही थी। चन्दा के मना
करने से समरसिंह चन्दा के पीछे भी नहीं जा सके। केवल
असीम, अश्रुधाराओं से वीरेन्द्र समर की छाती भीगने लगी
और किसी को, चन्दा के चले-जाने का समाचार उस दिन
नहीं मिला।

संस्कृत भवन वेद वेदाङ्ग पुस्तकालय

वाराणसी

आगत क्रमांक..... ८७२१

दिनांक..... ७/६

हिन्दी के शतकृत

साहित्य आचरति चतुर्वेदोप० द्वारकाप्रसाद शर्मा की

अनुपम मौलिक रचना

वारिन हेस्टिंग्स

उपराक्त महाशय भारतवर्ष में अंग्रेजी साम्राज्य की जड़ जमाने वाले कहे जाते हैं। ये महाशय आरम्भ में ईस्ट इंडिया कम्पनी में लकरी थे। लकरी से उन्नति करके ये महाशय तत्कालीन भारत के अंग्रेजी राज्य के सर्वप्रधान शासक हो गये। इस पुस्तक को पढ़ कर एक तरफ तो एक छोटे प्रादमी और जाति की उन्नति का आनन्द और दूसरी तरफ एक सबसे बड़े आदमी और जाति की अवनति का हृदय विदारक दृश्य दिखाई देता है। हिन्दुस्तान में अंग्रेजी राज्य स्थापित करने के लिये वारिन हेस्टिंग्स ने किस तरह नवाबों और बादशाहों को धोखा दिया, कुटिल नीति की चालें खेली और अन्याय किया, इसका पता इस पुस्तक से लगता है। इस पुस्तक के पढ़ने से कहीं घृणा, आश्चर्य, कहीं रोना, कहीं पछताना और कहीं अफसोस होता है। इस पुस्तक को आरम्भ करके बिना समाप्त किये आप नहीं छोड़ सकते। ऐतिहासिक पुस्तक होते भी आपको इस पुस्तक में उपन्यास का आनन्द आवेगा। भारतवर्ष की आरम्भिक अंग्रेजी इतिहास एक पढ़ने की चीज है जो इस पुस्तक के पढ़ने से चित्र की तरह सामने खड़ा हो जाता है। मू० ५।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

पता—भारतवासी प्रेस, दारागंज, इलाहाबाद

स्वाध्याय ग्रन्थमाला

१-योगासन और अक्षययुवावस्था-लेखक स्वामी

शिवानन्द सरस्वती । स्वास्थ्य और युवावस्था को अक्षय रखने के लिये आप इस पुस्तक में बताया गया है आसनों का अभ्यास कीजिये । आसनों का अभ्यास से शरीर स्थिर होने से मन भी स्थिर होगा । मन स्थिर होने से एकाग्रता सरलता से आ सकती है । एकाग्रता ही सब सिद्धियों की कुञ्जी है ।

२-प्राणायाम और अनन्त शक्ति-ले० स्वामी शिवा-

नन्द सरस्वती । प्राणायामो महाबलः । अनन्त बल प्राप्त करने का एकमात्र साधन प्राणायाम है । हनुमानजी, भोष्म, भोम तथा धृतराष्ट्र आदि अनेकानेक प्राचीन महावर्ती व्यक्तियों की अपार शक्ति का यही रहस्य है ।

३-जपयोग और देवदर्शन-जपार्त्त सिद्धिने संशयः

अर्थात् जप द्वारा सिद्धियां निश्चय प्राप्त होती है इसमें संशय नहीं । अपनी इष्ट सिद्धि तथा इष्टदेव के दर्शन प्राप्त करने किस प्रकार जप करना चाहिये जानने के लिये उक्त पुस्तक कल्पवृक्ष के समान है ।

४-सन्ध्या योग-ले० प्रतापनारायण चतुर्वेदी । सब

वेदों तथा उपनिषदों का सार । द्विजातियों की कामधेनु सन्ध्या, तथा गायत्री ही एकमात्र ऐसा साधन है जिसे अपने कर्तव्य की तरह करता हुआ साधक अपना सारी कामनाओं को प्राप्त कर सकता है । सन्ध्या, सम्बन्धी पूर्ण साहित्य का भंडार और गायत्री भक्तों के अनुभव युक्त पुस्तक । प्रत्येक द्विजाति के घर में अवश्य रहने योग्य पुस्तक ।

उक्त पुस्तकमाला की प्रत्येक पुस्तक का मूल्य २) है । डाक खर्च अलग ।

प्राइज डिस्टिन्क्शन अथवा पुरस्कार में देने योग्य बालकोपयोगी

आदर्श चरिता गली

नायकों के चित्र सहित निम्नलिखित जीवनों के पढ़ने से बालक आदर्श पुरुष बन सकते हैं। बिना अच्छे आदर्श सामने रखे बालकों का जीवन सुधर नहीं सकता। प्रत्येक जीवनी का मूल्य = 1 है। २० पुस्तकों से कम का आर्डर न आना चाहिये

- | | |
|------------------------------|---------------------------|
| १—भगवान श्रीरामचन्द्र | १८—अहिल्या बाई |
| २—यादवेन्द्र श्रीकृष्ण | १९—महारानी लक्ष्मीबाई |
| ३—गौतम बुद्ध | २०—रामकृष्ण परमहंस |
| ४—स्वामी शङ्कराचार्य | २१—स्वामी रामतीर्थ |
| ५—जगद्गुरु श्रीरामानुजाचार्य | २२—भारतेन्दु हरिश्चन्द्र |
| ६—पृथ्वीराज चौहान | २३—स्वामी विवेकानन्द |
| ७—गुरु नानक | २४—गोपाल कृष्ण गोखले |
| ८—मीरा बाई | २५—लोकमान्य तिलक |
| ९—गोस्वामी तुलसीदास | २६—चित्तरंजनदास |
| १०—महाराणा प्रतापसिंह | २७—शेरशाह सूरी |
| ११—समर्थ रामदास | २८—महाकवि सूरदास |
| १२—छत्रपति शिवाजी | २९—ईश्वरचन्द्र विद्यासागर |
| १३—गुरु गोविंदसिंह | ३०—दादाभाई नौरोजी |
| १४—नेपोलियन | ३१—महारानी विक्टोरिया |
| १५—महाराज रणजीतसिंह | ३२—राजर्षि भीष्मपितामह |
| १६—हरीसिंह नलवा | ३३—सिकन्दर |
| १७—महादाजी सैधिया | ३४—सुभाषचन्द्र बोस |

पता—भारतवासी प्रेस, दारागंज—प्रयाग

